

योगी गुरु जी के प्रश्नोत्तर — भाग 23

सत्संग से 200 प्रश्नोत्तर

आध्यात्मिक प्रत्यक्ष ज्ञान मार्ग

adhyatmikpratyakshgyan.com

प्रश्न: महाराज जी, वाल्मीकि जी अगर उल्टा ही नाम जप रहे थे, लेकिन कुछ ना कुछ कर तो रहे थे ना — एकाग्रता के साथ कुछ कर रहे थे। (P23-0001)

चाहे उल्टा कर रहे थे, लेकिन आप ये देखिए कि उन्होंने कर्म को पूरी तरह छोड़ दिया, तुरंत उसी जगह पर। आप यह नहीं देख पाए कि उन्होंने तुरंत कर्म को पूरी तरह छोड़ दिया? इस बात को भी तो देखिए। मूल — आप क्या करते हो, वह मायने रखता है। पता चला कि आप बेईमानी-दुष्कर्म कर रहे हो और ऊर्जा कहीं से इकट्ठा कर रहे हो, तो आपका क्या होगा? उस ऊर्जा को कहां लगाओगे? वहीं लगाओगे। ईमानदारी सत्कर्म करो, और उसको करते हुए कुछ करो। मूल को पकड़ो — गलती कहां हो रही है।

प्रश्न: तो इसका मतलब महाराज जी, फिर उसके दो पक्ष हो गए — एक तो उन्होंने कर्म को छोड़ दिया, और दूसरा जप को अपनाया? यानी पहले वाले को पूरी तरह करके, उसे अपना आधार बनाकर, तब वे दूसरे वाले की तरफ गए? (P23-0002)

वो पूरी तरह कर्म को छोड़ दिए, और 'कुछ नहीं चाहिए' में आ गए। इसमें आने के बाद कुछ भी मिल जाए, वह लेके अपना कल्याण कर लेगा, क्योंकि उसे अब कुछ चाहिए ही नहीं। और फिर बोलते हैं कि उनके शरीर पर दीमक तक लग गई थी। तो आप उनकी तुलना मत करिए। नाम मैंने ही बोला, इसलिए बोला कि आप समझिए। आप जहां बैठे हो, वहां का हाल यही है, क्योंकि मैं भी वहां कभी था; लेकिन मैं पूरी तरह समझकर यहां बैठा हूं। तुम्हें निकलने नहीं दूंगा, तुम्हारे हर प्रश्न का जवाब दूंगा — चाहे तुम भक्ति योग से जाओगे, चाहे ज्ञान योग से, चाहे ध्यान योग से, चाहे योग मार्ग से, कहीं से भी जाओगे, मैं तुम्हें जवाब दूंगा।

प्रश्न: गुरु जी, वैसे तो जो बातें मैं उठा रहा हूं, वे संशय की श्रेणी में ही आती हैं।

(P23-0003)

ठीक है। हमारा काम है संशय मिटाना। अगर मैं आपका संशय नहीं मिटा पाऊं, और मिटाने के लिए आप तैयार हो, तो मुझे यहां नहीं बैठना चाहिए। आपका काम है संशय में प्रश्न करना, क्योंकि संशय आपके पास है; आपकी गलती भी नहीं, क्योंकि आप वहां हो। मेरा काम है आपके संशय को हटाना, बस आप तैयार रहो; आप तैयार नहीं रहोगे तो मैं भी कुछ नहीं कर सकता। तो कहने का मतलब यह है कि मूर्ति पूजा से लेकर विधियां तब सहायक बनेंगी जब आप ईमानदारी सत्कर्म अपनाओ। या तो पूरी तरह बैठ जाओ, तभी उठो जब उपलब्धि हो — ऐसे भी हो जाएगा। लेकिन आप कहिए कि नहीं, मैं कर्म करूंगा, और बेईमानी-दुष्कर्म के साथ विधियां अपनाओगे, तो आपका पतन के अलावा कुछ नहीं होगा, क्योंकि आपको ऊर्जा मिलेगी तो बेईमानी-दुष्कर्म और बढ़ जाएगा। राक्षसों ने भी देवी-देवताओं के दर्शन किए ना — उनका पतन हुआ, क्योंकि उनके अंदर बेईमानी थी, समाज को सताने के लिए ताकत चाहिए थी। तो यही हाल साधकों का हो रहा है — एक तरफ बेईमानी-दुष्कर्म कर रहे हैं, एक तरफ विधियां अपना रहे हैं, और पहले से ज्यादा भटक रहे हैं। आप अपना जीवन जांच लो — जब आप इस मार्ग में नहीं आए थे तब का देख लो, और जब से विधियां अपनाए हो तब से देख लो। मेन गलती यह हो गई कि विधियां देने वाले ने आपकी योग्यता नहीं जांची, और वह खुद योग्य नहीं था; आपको बोल नहीं पाया कि बेईमानी-दुष्कर्म छोड़ोगे तब मैं आपको दूंगा। आज लोग पंजीरी की तरह मंत्र बांट रहे हैं। पहले गुरु तब गुरु मंत्र देता था जब पूरी तरह जांच लेता था कि तुम्हें कुछ नहीं चाहिए।

प्रश्न: गुरु जी, थोड़ी देर पहले आपने कहा था कि गुरु बारह बरस तक परीक्षण करते थे और उसके बाद मंत्र देते थे; तो ये आपकी ही बात का खंडन हो गया? (P23-0004)

खंडन नहीं हुआ, उसे मैं समझाऊं। खंडन होता तो मैं बोलता ही नहीं; मैं जितना बोल रहा हूं, समझ है तभी बोल रहा हूं, और आपके भ्रम को तोड़ने के लिए ही बोल रहा हूं। यहां पर मैं कृष्ण और गीता की बात कर रहा हूं। जब हमें 'हरे कृष्णा' जपने के लिए बोला जाता है — क्या कृष्ण भगवान ने बोला कि अर्जुन, मेरा नाम जपो? नहीं, उन्होंने कर्म का सिद्धांत बताया। अर्जुन किस जगह खड़े थे? गृहस्थ जीवन में; उनका दायित्व था, जिम्मेदारी थी, कर्म करना बहुत जरूरी था, तो उन्होंने कर्म का सिद्धांत बताया। वाल्मीकि जी, ध्रुव जी — ये सब पूरी तरह छोड़ के निकल गए, तब उन्हें मंत्र दिया गया। देश-काल-स्थिति-परिस्थिति में तय करना होता है कि इसको क्या देना है। जब व्यक्ति अपने परिवार-समाज के साथ जीते हुए अपना कल्याण करना चाहता है, तो उसे कर्म का सिद्धांत बताया जाता है; और जब वह सब छोड़ के संन्यासी मार्ग पर चला जाता है कि अब मुझे कुछ नहीं चाहिए, तो उसे कोई भी नाम दे दिया — अब ये निकाल लेगा। देखिए, नारद जी ने पहले 'राम राम' बोला, नहीं निकला, 'मरा' निकला; बोले अच्छा, 'मरा' जप लो। तो मंत्र किसका हुआ? वाल्मीकि जी का। बस यह भाव की बात है — जो भाव उनके भीतर से निकला, उसी को पकड़ ले, और तेरा कल्याण तुरंत; बस भरपाई करना है पिछले कर्म का, क्योंकि तुझे कुछ नहीं चाहिए। आज गृहस्थों को मंत्र बांटा जा रहा है, इन्हें कर्म का सिद्धांत बताना था। अर्जुन 'मेरा' के मोह में भाग रहे थे, और वाल्मीकि जी समझ गए थे कि कुछ नहीं है, उनका मोह टूट गया था। तो गुरु साधक की स्थिति देखता है — कौन सा साधक है, कैसा आया है — और स्थिति-परिस्थिति देखते हुए मार्ग बताता है।

प्रश्न: गुरु जी, जब बात शुरू हो रही थी तो मुझे लगा था कि आप साधना आदि का पूरी तरह निषेध कर रहे हैं, लेकिन अब लग रहा है कि निषेध सिर्फ इसलिए था कि अपरिपक्व व्यक्ति वैसा ना करे। दूसरा, आपने ध्यान का उदाहरण लेकर कहा था कि ध्यान करने वाला और जिसका ध्यान किया जा रहा है, वह बाहरी चीज हो गई; लेकिन वाल्मीकि जी 'मरा मरा' के रूप में ध्यान तो कर ही रहे थे — तो सहायता के लिए उसका उपयोग किया जा सकता है? (P23-0005)

समझना — वाल्मीकि जी ने 'मरा मरा' को मुक्ति और मोक्ष के लिए पकड़ा; भाव था मुक्ति और मोक्ष का। तो किसी मंत्र को आप किस भाव से पकड़ते हो, वो मायने रखता है। अगर यह बात आपको पक्का है कि यह पत्थर मारने से आप निकल जाओगे, तो निकल जाओगे। पक्का आपको होना चाहिए। पहुंचना कहीं नहीं है, बस छूटना है; आपके अंदर तो है ही। आपने इसे पकड़ा किसके लिए? मुक्ति के लिए, मोक्ष के लिए। तो पीटते-पीटते आप इसमें हो जाओगे, और इससे तो कुछ नहीं चाहिए था, तो यह यहां छूटेगा और आप अपने आप में आ जाओगे — यही मुक्ति है। सारा खेल भाव का है।

प्रश्न: तो गुरु जी, यह विश्वास की बात हुई? (P23-0006)

विश्वास की बात नहीं। विश्वास तो प्रकृति की एक व्यवस्था है, प्रथम सीढ़ी है। यह आपके भाव की बात है, विश्वास की बात नहीं — यहां बस आप हो। विश्वास तो दो में होता है; एक में क्या विश्वास? यहां सिर्फ आप हो। तो यह बस भाव की बात है। अगर आपको पक्का हो गया कि यह खट-खट करने से मैं पहुंच जाऊंगा, तो ऐसे करने से आप पहुंच जाओगे; लेकिन यह पक्का आपको होना चाहिए, थोपा हुआ नहीं।

प्रश्न: महाराज जी, प्रह्लाद के लिए खंभे में भगवान आए — ये तो अलंकारिक भाषा है, ऐसा होता तो नहीं? (P23-0007)

ठीक है, मैं कह रहा हूँ समझने के लिए, आप समझिए; आप उसे मत पकड़िए। हमारे सामने कहानी है, उससे हम क्या सीख के निकल जाते हैं — कहानी सही है या गलत है, उसमें नहीं जाना; हमें छूटना है। बचपन में मां कहती थी 'चंदा मामा, दूध पी ले', और हम पी लेते थे। क्या चंदा मेरा मामा है? दूध पिलाने का एक तरीका है। मां ना झूठ बोल रही थी ना सच बोल रही थी, दूध पिला रही थी तुम्हारे हित के लिए। तो यह सब आपका भ्रम कैसे टूटे, इसके लिए बोला जा रहा है। आप पूछोगे क्या सही है, क्या गलत — मैं कहूंगा दोनों नहीं हैं, क्योंकि दोनों हैं तो तुम नहीं हो। ना गलत है ना सही; उपयोग कर लो, निकल जाओ, सीधी सी बात। मैंने कभी कहा मुझ पर विश्वास कर? मैं तो आप लोगों से कहता हूँ — इतना विश्वास करना कि मुझ पर कभी विश्वास ना करना। क्योंकि ज्ञान को समझना है और निकल जाना है; यह शरीर पहले नहीं था, बाद में नहीं रहेगा। ज्ञान लो, आगे बढ़ो — ये कभी धोखा नहीं देगा। और ज्ञान किसी का होता नहीं, जिसने समझा उसका हुआ। वही झूठ कभी सच होता है, वही सच कभी झूठ होता है — सब परिवर्तनशील है। सदुपयोग करो तभी निकल पाओगे; दुरुपयोग करना बंधन, सदुपयोग करना मुक्ति। बस इतनी सी बात है।

प्रश्न: महाराज जी, आप वाला मंत्र काम करेगा — ईमानदारी? (P23-0008)

ये तो मूल मंत्र है, ये मेरा मंत्र ही नहीं। यही तो मंत्र है निकालने के लिए, और निकाल के भी खत्म हो जाएगा। ईमानदारी आग है — जैसे आग सबको जलाती है, बाद में खुद बुझ जाती है, ऐसे ही एक समय ऐसा आएगा। सत्कर्म आपको और ताकत देता है, और फिर एक समय ऐसा आएगा सब जल जाएगा — ईमानदारी भी गई और सत्कर्म भी गया। मैं कह रहा हूँ ईमानदारी सत्कर्म अपना लो, सब खत्म है; सीधा है, बहुत साफ-सुथरा है, ज्यादा सोचो नहीं। बस फैसला खुद को करना है — पक्का निकलना चाहते हो? जिस दिन कहोगे 'हां, पक्का निकलना चाहता हूँ', उस दिन दुनिया की कोई ताकत रोक नहीं सकती; और जब तक पक्का नहीं करोगे, दुनिया की कोई ताकत निकाल नहीं सकती। कृष्ण भगवान ने दुर्योधन के लिए बहुत प्रयास किया, निकाल पाए? कंस मामा के लिए बहुत प्रयास किए, बाद में मारना पड़ा। अर्जुन निकल पाए, क्योंकि पहले अर्जुन ने 'कुछ नहीं चाहिए' का प्रयास किया; बाद में कृष्ण ने प्रयास किया। लेकिन पहले उन्होंने बहुत परीक्षा ली — जब पक्का हो गया कि अर्जुन को अब कुछ नहीं चाहिए, तब कर्म का सिद्धांत बताया।

प्रश्न: गुरु जी, अभी माता जी की बात पर आपने कहा कि जब हम कभी पहली बार आए होंगे तो उस समय हमको ज्ञान था, और फिर अज्ञान उत्पन्न हो गया और हम फिर से आ गए — क्या ये आपने सिर्फ समझाने के लिए कहा है? (P23-0009)

हां, आप जैसे समझ लीजिए। लेवल देख के समझाने के लिए बोलते हैं। हो सकता है कोई और वही प्रश्न किया होता तो मैं उसके लिए कुछ और बोलता; मुझे खुद नहीं पता मैं क्या बोलता। जैसे आपके सामने मैंने खुद दोहरी बात की — करना पड़ा, आपके लिए, कैसे भी आपका संशय हटे, आपकी भ्रांतियां हटें और आप अपने आप को समझें। बस इसीलिए, और कुछ नहीं। पता नहीं इसके बाद फिर मिलें ना मिलें, लेकिन यह अच्छी तरह समझ लो — ईमानदारी और सत्कर्म के अलावा दूसरा कोई रास्ता नहीं, मेन यही है।

प्रश्न: गुरु जी, यह जो बात कही जा रही है, वह बहुत ही हाई लेवल पर कही जा रही है। जैसे विद्यालय में टीचर बच्चों को बोलता रहे कि सच बोलो, तुम्हारा सब भला हो जाएगा — तो कितने बच्चे सच बोलने वाले होंगे? उनको सच तक पहुंचाने के लिए बहुत कुछ समझाना, एक्टिविटी करवाना पड़ता है, वह एक लंबा प्रोसेस होता है। एक छोटा सा मैसेज देकर छोड़ने से शायद ज्यादा बात बनने वाली नहीं। तो जो यहां आया, क्या आप उसकी स्थिति के हिसाब से उसको गाइड करते हैं? (P23-0010)

यह पढ़िए क्या लिखा है — 'बेमतलब से आना नहीं, मतलब है तो आना नहीं।' यह आखिरी यात्रा करवाने के लिए बैठा है। मैं लाइव में भी बोलता हूं — जिसे कुछ नहीं चाहिए वो आए; अगर कुछ चाहिए तो मत आना, पछताओगे, भाड़ा-किराया भी बर्बाद हो जाएगा। यह तो मैं चिल्ला-चिल्ला के बोलता हूं। जिसे कुछ चाहिए, उसके लिए प्रत्यक्ष ज्ञान नहीं है; जिसे कुछ नहीं चाहिए — जिसका 'कुछ नहीं चाहिए' का भाव बना है — वह 'कुछ नहीं चाहिए' की स्थिति पर कैसे पहुंच जाए, उसके लिए प्रत्यक्ष ज्ञान है। यहां जितने लोग आए हैं, 'कुछ नहीं चाहिए' के लिए आए हैं, चाहे एक दिन रहें चाहे दो दिन, क्योंकि मैं ऐसा बोलता ही हूं और साधक सुनता है। अब इनको कैसे समझाना है, वह मैं समझा रहा हूं। लोग पहले मुझे सलाह देते थे कि अगर आप अच्छे कपड़े पहनें तो भीड़ लगेगी। फिर क्या होगा? मैं तो ज्ञान दे रहा हूं आखिरी के लिए, और ज्यादातर संख्या मैंने देखा 'चाहिए' में है, तो वो लोग फिर चले जाएंगे। फटे कपड़ों में वही बचता है जिसे ज्ञान चाहिए — यह फटा कपड़ा मेरा छंट देता है, मेरे पास छंट के लोग आते हैं। क्योंकि यहां आना मतलब अपने आप को खत्म करना है; खत्म करना है तो आप यहां रहो, नहीं तो जाओ।

प्रश्न: गुरु जी, 'कुछ नहीं चाहिए' के भाव में — जैसे कोई मजदूर है, उसकी रोजी-रोटी, आय — उसमें भाव नहीं होना चाहिए? और परिवार में, घर-गृहस्थी में रहते हुए एकदम 'कुछ नहीं चाहिए' की स्थिति तो नहीं हो सकती। (P23-0011)

नहीं, मेहनत करो उसके लिए; बिना मेहनत का भाव मत रखो। और पता चला कि आप जहां काम कर रहे हो, वहां दिन भर सो के पगार ले रहे हो, तो ये भी बेईमानी है। जरूरत में जियो — जरूरत में जीना 'कुछ नहीं चाहिए' में जीना है, आप इसे समझिए। जितनी जरूरत है उसमें जियो; जितनी आपकी मेहनत है उतना पगार लो, उतना पैसा लो। जैसे मेरी उंगली में चोट लग गई — नदी में स्नान कर रहा था, गिर गया, उंगली फट गई, खून ही खून, और हमारी जेब में एक भी रुपया नहीं। रास्ते में एक लड़के से परिचय हो गया था, वो साथ में गया; मैंने कहा अगर पैसा चाहिए तो इससे दिला दूंगा और बाद में मंगा के इसको दे दूंगा। डॉक्टर ने इलाज किया, फिर बोला — परिक्रमा वासी का मैं पैसा नहीं लेता। हमने कहा, डॉक्टर साहब, मैं परिक्रमा वासी नहीं हूं। बोले नहीं-नहीं, आपसे पैसे नहीं लेंगे। तब ठीक है — लेकिन यह पता चल जाए आपको कि मैं परिक्रमा वासी नहीं हूं; अब नहीं लो तो बात अलग है। चाहता तो मैं चला जाता, लेकिन मैं बेईमान हो जाता। पैसा उसने तब भी नहीं लिया, लेकिन मैं नहीं बोलता तो बेईमान होकर जाता, और मैंने बोल दिया तो ईमानदार होकर निकल लिया। बस इतनी सी बात है। अपनी मेहनत का पैसा लो, जरूरत में जियो, सत्कर्म, ईमानदारी — और 'कुछ नहीं चाहिए' मतलब योग्यता से ज्यादा नहीं चाहिए। समोसे खाना है तो खाऊंगा, लेकिन ईमानदारी के पैसे से — ये ध्यान रखना। इस दुनिया में जितनी भी वस्तुएं बनी हैं, उपयोग करने के लिए हैं — सदुपयोग, ईमानदारी के धन से; दुरुपयोग नहीं। जिससे आपका हित हो उन वस्तुओं का उपयोग करना, जिससे अहित हो वो नहीं। बुरी वस्तुओं का सेवन कभी मत करना; ऐसी वस्तुओं का उपयोग करना जिससे आप आत्मिक रूप से गिरो नहीं और शरीर को भी लाभ हो।

प्रश्न: गुरु जी, अपना शुद्ध स्वरूप क्या है? (P23-0012)

अशुद्ध को छोड़ दो, बस बात खत्म। अशुद्ध का नाप है, शुद्धता का नहीं — यह ध्यान रखना। अशुद्ध आपने पैदा किया है तो उसका दायरा है; शुद्धता का नहीं। अशुद्ध छोड़ दो, बस बात खत्म करो। क्योंकि जिसका दायरा है उसी से निकला जा सकता है; जिसका दायरा ही नहीं, उससे कैसे निकलोगे? अपवित्रता का दायरा है, पवित्रता का नहीं; उसका कोई नाप नहीं, वो अनंत में हो गया।

प्रश्न: गुरु जी, आप साधक को समझाकर कहाँ पर पहुँचाना चाहते हो? (P23-0013)

कहीं नहीं। कहीं नहीं पहुँचेगा, तभी वो अपने आप में हो पाएगा। कहीं पहुँचे हो — शारीरिक या मानसिक; दो यात्रा हर वक्त कर रहे हो, या तो शारीरिक या तो मानसिक। पहुँचने से ही तो छूटना है।

प्रश्न: प्रणाम गुरु जी, उपनिषद के हिसाब से अपने शरीर के प्रति मनुष्य का कर्तव्य क्या है? (P23-0014)

अपने तरीके से जो चाहिए, उसका त्याग कर — मेरे शब्द में यही उपनिषद का सार है। द्वैत कब है? जब आपको अपने तरीके से चाहिए। अद्वैत कब है? जब आपको कुछ नहीं चाहिए। बस बात खत्म, यही उपनिषद का सार है। और आवरण से मुक्त हो जाना — वेदांत का सार है। रामायण का सार है — रामचरितमानस, राम का चरित्र अपने जीवन में उतार लो। गीता का सार है — 'मेरा' और 'कर्ता' से मुक्त हो जाओ। 'मेरा' से मुक्त होने के लिए ठीक शब्द का प्रयोग करो; कर्ता से मुक्त होने के लिए अनुमान लगाना छोड़ दो। अनुमान लगाना छोड़ दिया तो कर्ता का भाव प्रकट ही नहीं होगा, बनेगा ही नहीं। बस जैसा है वैसा बता दो — प्रत्यक्ष परिणाम आने के बाद बताओ; परिणाम के पहले बोले तो फंस गए। परिणाम के पहले आप बोलते हो मान के चक्कर में, वही कर्ता का भाव आता है। ठीक शब्द का प्रयोग करो तो राग-द्वेष होगा ही नहीं। परिणाम के पहले अगर आपने बता दिया, और जैसा बताया वैसा हो गया, तो 'मैं' खड़ा हो जाएगा, आप लोगों को ढूँढोगे; और नहीं हुआ तो लोग आपको ढूँढेंगे। आप पूरा गीता पढ़िए, आपको समझ में नहीं आएगा कि 'मेरा' और कर्ता से कैसे मुक्त हों; मैं आपको सार भी बता दिया और तरीका भी बता दिया। सार पकड़ के निकल जाओ, या फिर पढ़-पढ़ के यहीं आओगे — आना तो आपको यहीं पड़ेगा। ईमानदारी, सत्कर्म, और योग्यता से ज्यादा पाने की इच्छा तो आपको छोड़नी ही पड़ेगी, तभी कुछ होगा, नहीं तो ऐसे ही घूमते रह जाओगे। जब तक योग्यता से ज्यादा चाहिए, ऐसे भटकते रह जाओगे। और यह आपको ही करना है — चाहे अभी करो चाहे कल, लेकिन कल-कल करते-करते काल आ जाता है।

प्रश्न: गुरु जी, कर्म का सिद्धांत क्या होता है — पिछला कैसे खत्म होता है और अगला कब बनता है? (P23-0015)

आप कुछ कर रहे हैं तो पिछला खत्म हो रहा है। अगला कब तैयार होगा? जब आप बेईमानी करेंगे। अगर आप ईमानदारी अपना लिए, तो अगला तैयार नहीं होगा — यह कर्म का सिद्धांत है। अगला तैयार तभी होगा जब आप बेईमानी करते हो; ईमानदारी में अगला तैयार नहीं होता। 'ईमानदारी मुक्ति, बेईमानी बंधन' — यह पहली लाइन ऊपर मैंने लिखी है, वहां से शुरुआत है; और यहां आखिरी — 'बेमतलब से आना नहीं, मतलब है तो आना नहीं' — यहीं आके आपको खड़ा होना है। बेईमानी बंधन, ईमानदारी मुक्ति — वही अपनाना है, और फिर यहां आकर खड़ा हो जाना है।

प्रश्न: गुरु जी प्रणाम, मेरा सवाल यह है कि हम अपने इष्ट देव को कैसे पहचानें?

(P23-0016)

या तो इष्ट देव से पूछो — इतने देवता हैं, 33 करोड़ — फिर बोलो भैया, जो मेरा इष्ट है वो आए, बताए। आप उतने सामर्थ्यवान होंगे तो आके बता देंगे। जैसे आप अनाउंस कर दो कि जिससे मुझे शादी करनी है वो आ जाए — दरिद्र रहोगे तो कोई नहीं आएगा, लोग आप पर हंसेंगे; लेकिन राजा रहोगे, राजकुमार रहोगे, तो बहुत लोग लाइन लगा लेंगे। कहने का मतलब है, सामर्थ्यवान हो तो चिल्ला दो कि जो मेरा इष्ट हो आ जाए — आ जाएगा; नहीं तो नहीं आएगा, फिर ढूँढो उसे। कमजोर होंगे तो कहोगे कहीं जुगाड़ करवा दो; और सामर्थ्यवान है, योग्य है, तो रिश्ते छांटता रहता है। तो सामर्थ्यवान बनिए। गिड़गिड़ाने से कुछ नहीं होगा। मैं तो खुद कहता हूं परमात्मा से — मुझ पर कभी कृपा ना करना; अगर मुझे सड़ के मरना होगा तो मैं सड़ के मरने के लिए तैयार हूं, मेरा एक भी कर्म इधर-उधर नहीं होना चाहिए, सब भोगूंगा, मैंने किया है। जो चाहिए उसके लिए काम करो, बस बात खत्म; गिड़गिड़ाने से कुछ नहीं होता। जैसे ही काम चालू किया, आप उसके करीब होने लगे। लेकिन शुरुआत कर दो — बात मत करो।

प्रश्न: प्रणाम गुरु जी, पाप-पुण्य सब जानते हैं, लेकिन पाप क्रिया लोग बार-बार क्यों करते हैं? (P23-0017)

लोगों को छोड़ दीजिए, आप अपनी देखिए — आप क्या कर रहे हो। जोर पड़ता है खुद से मुलाकात करने में, एकदम। दूसरे से मुलाकात करने में चापलूसी चाहिए। गुरु ऐसा होना चाहिए जो मुझको मुझी से मिला दे। तो गुरु आईना है — आईना का मतलब होता है, जैसे हो वैसे दिखो। तो गुरु से मुलाकात हो गई, तो सर्वप्रथम आपको पहले औकात दिखाएगा, क्योंकि जैसे हो वैसे दिखोगे। फिर आपको शब्दों के द्वारा कुछ और दिखाएगा — आपको अभी की स्थिति दिखा देगा, और फिर आपको आखिरी दिखा देगा।

प्रश्न: गुरु जी, माया किसे कहते हैं? (P23-0018)

माया — एक तो प्रभु की माया है, उसमें आनंद से जीवन है; और एक आपकी माया है। यहां सबकी अपनी-अपनी माया है, और सब अपनी-अपनी माया में ग्रस्त हैं। तो जहां तक मैंने समझा, आपकी माया का निर्माण बेईमानी से हुआ है — बेईमानी माया है। इसे आप छोड़ दीजिए; बेईमानी-दुष्कर्म बस छोड़ दीजिए जीवन में। और सबसे ज्यादा अगर आपसे बेईमानी होती है तो पता है किससे? बोलचाल में — बाजार में हो, रास्ते में हो, बिना मतलब का बोलते हो, 'आ गया हूं, सामने ही हूं'। क्या जरूरत है? आदत है, लेकिन इस आदत की वजह से आप कितना गिर रहे हो, आपको पता है? संस्कार बने जा रहे हैं। कोई आया, बोला मुझे उधार पैसे दे दो — आपने कहा 'मेरे पास नहीं है'। सीधा कह दो ना: 'मेरे पास है, लेकिन तुम्हारी योग्यता नहीं है, इसलिए नहीं दूंगा।' अगर आप यह बात बोल दो, तो उसके अंदर एक ऊर्जा जगेगी, उसको आपके शब्दों की चोट लगेगी, और जाकर खूब मेहनत करेगा कि इससे बड़ा बन के दिखाऊंगा। चोट जरूरी है, लेकिन सच बोलोगे तब ना; तुम तो झूठ बोलते हो, चोट लगने ही नहीं देते। और तुमने उसके साथ धोखा किया — कहा मेरे पास नहीं है, लेकिन था, दे सकते थे।

प्रश्न: गुरुदेव, अगर हम देखें तो लगभग 90 प्रतिशत मनुष्य अपना कल्याण ही चाहता है और मुक्त होना चाहता है, लेकिन फिर भी देखने में यह आता है कि अध्यात्म और सच्चाई पर कुछ दूर ही चल पाता है — ऐसा क्यों? (P23-0019)

99 प्रतिशत लोग कामनाओं में घूम रहे हैं। मैं आपको सीधी बात बताता हूँ — मुझे आज तक एक भी व्यक्ति नहीं मिला जो पूरी तरह मुक्त होना चाहता हो; अभी तक मेरे जीवन में नहीं मिला। बात करने वाले लोग हैं, लेकिन पूरी तरह तैयार कि बस अब मुझे पीछे नहीं जाना है — ऐसे लोग अभी तक नहीं मिले। मिलते तो हैं, लेकिन उनको पीछे जाना है। अभी तो प्लानिंग चल रही है, अपने को तैयार कर रहे हैं। जिस दिन निकलने के लिए तैयार हो गए, उस दिन पीछे नहीं जाओगे, तब निकल पाओगे। मुझे 13 साल में एक भी व्यक्ति नहीं मिला जिसे सच में निकलना है; बातें करने वाले खूब मिले। चलो, कम से कम तैयार तो कर रहे हैं — एक तरह से यह भी बेईमानी है, लेकिन समझ तो रहे हैं, कम से कम बेईमानी-दुष्कर्म कम तो कर रहे हैं, आ तो रहे हैं। कम से कम क्वार्टर पीना बंद करके मंदिर में घंटी तो बजा रहे हैं — परिवार तो ठीक है, पत्नी तो खुश है, बच्चे तो खुश हैं, गंदी आदतें तो छूटीं।

प्रश्न: गुरु जी, मैं कामनाओं से मुक्त होना चाहता हूँ, उसके लिए क्या करना है?

(P23-0020)

बस उम्मीद छोड़ दो — बहुत आसान। ईमानदारी और सत्कर्म, और जरूरत में जीना, योग्यता से ज्यादा पाने की इच्छा का त्याग।

प्रश्न: महाराज जी, जानना कैसे जानना चाहिए? कृपया प्रकाश डालकर हम सभी को कृतार्थ करें। (P23-0021)

जानना नहीं — जानते-जानते जानने से भी मुक्त होना है, क्योंकि जब तक जानते रहोगे, तब तक बाहर हो। जानना इतना है कि जानना कुछ नहीं। अब या तो इतने से समझ लो, या तो जानते-जानते फिर समझ में आएगा। क्योंकि जब तक जानोगे, जिसे जाना जा रहा है और जानने वाला — ये दोनों अलग हैं। तो जानने से अगर आप मुक्त हो गए, जानने को कुछ नहीं बचा, तो कौन बचेगा? जानने वाला। बात खत्म — बहुत आसान है। क्या है जानने के लिए, बताइए? क्या यह पत्ता — पहले पत्ता था? नहीं। बाद में पत्ता रहेगा? नहीं। तो क्या जानोगे, क्या जान लोगे इस दुनिया में? जानने के लिए दुनिया में कुछ नहीं है, तो काहे को जानना चाहते हो? उपयोग करो, निकल लो, सीधी सी बात। 'मेरा' बनाने के चक्कर में फंस गए। अपनी सामर्थ्य के अनुसार जरूरत में उपयोग करके निकलना था, लेकिन आपने लूटपाट चालू किया — मेरा, मेरा, मेरा।

प्रश्न: गुरु जी, उपलब्धि के बाद भी लोगों ने भोजन मांगा — भूख लगी, भूख का विचार आया, तभी भोजन मांगा। तो विचार से मुक्त कैसे होते हैं? (P23-0022)

विचार आया कि आप अज्ञानता में फंसे हो, आप उपलब्धि में जाओ — तभी ना ज्ञान दिए; आपको अलग समझे, तभी ना आपको मार्ग बताया। तो विचार आए, तभी ना आगे बढ़ेगा। विचार से मुक्त कैसे होता है? होता नहीं — कभी नहीं। विचार में राग-द्वेष आ रहा है, उससे मुक्त होना है; विचारों से तकलीफ नहीं है। ध्यान से काम करना था — ध्यान से काम करोगे तो काम में ध्यान आ जाता है; ऐसा ध्यान से करना था कि कोई गलती ना हो, बस बात खत्म। लेकिन ध्यान में लगा दिया। ध्यान किससे है? आपसे है ना। फिर मन आपसे है — तो मन के चक्कर में क्यों पड़े हो?

प्रश्न: गुरु जी, ये साधनाएं, विधियां तो स्वयं को जानने के लिए करते हैं — मूल प्रश्न तो यही रहता है कि स्वयं को जानें। (P23-0023)

कौन सी विधि से स्वयं को जान लोगे? बताइए, मुझे भी तो पता चले। अच्छा एक बात बताइए — स्वयं को जानने की क्या जरूरत है? कौन जानेगा स्वयं को? स्वयं तो है ही। जिसे जाना जा रहा है वो अलग है और जानने वाला अलग है — फिर तो आप वहीं के वहीं हो। यही तो अविद्या है, यही तो अज्ञान है। स्वयं को नहीं जानना है, जानने से मुक्त होना है। जब तक जानना है, तब तक द्वैत है — जानने वाला और जिसे जाना जाएगा। ईमानदारी-सत्कर्म तो मैंने कहा ना, आग है। ध्यान तो अपने आप आ रहा है, उसमें क्या सिखाओगे? सिखाना यह चाहिए — भैया, एक काम करो, जब काम करो तो इतना ध्यान रखना कि कोई गलती ना हो, बेईमानी-दुष्कर्म मत कर; इससे कुछ होगा। अब लोग ध्यान सिखा रहे हैं — ध्यान पत्ते पर जा रहा था, पत्ता छोड़ो, इस पर ध्यान लाओ — तो क्या हो जाएगा? एक व्यक्ति को जमीन से उठा के सोने के सिंहासन पर बैठा दिया, तो उसमें बदलाव आ जाएगा? और उसमें ताकत का उपयोग भी कर रहा है — जैसे एक रबड़ यहां बंधी है और आपने तेजी से खींचा, खींचते-खींचते छोड़ा, तो कहां जाएगी? मूल जगह पर। बचपन से मां कहती थी — ध्यान से खेलना बेटा; मतलब चोट ना लगे ऐसा खेलना। ध्यान से पढ़ना, ध्यान से लिखना। छोटा सा बालक संसार को नहीं समझ पाता, लेकिन समझ जाता था कि मां क्या कह रही है, पूछता भी नहीं था। काश ये बोल दिया गया होता कि बेटा, ध्यान से कर्म करना — और शाम को पूछती कि ध्यान से कर्म किया ना? तब बताता कि हां, मैंने ध्यान से कर्म किया — ईमानदारी से, सत्कर्म से, किसी का दिल नहीं दुखाया। ये पूछने वाला कोई नहीं था, और हम गलतियों पर गलतियां, अपराध पर अपराध करते गए। अब आध्यात्मिक नाम से गुरु मिल गए, बोले आओ हम तुम्हें ध्यान लगवाएंगे। कुछ समय के लिए बॉडी रिलैक्स होती है, घंटों बैठ जाओगे, ऐसा लगता है शरीर है ही नहीं; उठे, फिर वहीं के वहीं। मेन यह था कि जहां-जहां आपका ध्यान राग-द्वेष में जा रहा था, वहां से आपको निकालना था — राग-द्वेष हो क्यों रहा है, उसको जांचना; जांचने में ध्यान आ जाता है, और जांच के उस पर कर्म करना था। जैसे आपके घर में कोई मशीन बिगड़ गई — क्या उस पर देखने से वह ठीक हो जाएगी? नहीं, उसे खोल के ध्यान से देखना पड़ेगा कहां बिगड़ी है, कौन सा सामान खराब है, फिर वो लाकर लगाओगे तब जाकर वो बनेगी। वैसे ही पहले देखना है कि मैं कहां फंसा हूं, कहां उलझा हूं, कहां गलतियां कर रहा हूं — जब यह देख पाओगे, फिर आप निकाल लो, इतनी ताकत आप में है; लेकिन बिना देखे नहीं। अब यह देखना है कि आपको निकलना है कि रिलैक्स होना है।

प्रश्न: गुरु जी, नारायण को हम परमात्मा कह सकते हैं, और राम और कृष्ण परमात्मा का अवतार नहीं हैं? (P23-0024)

मैं यह कह रहा हूँ — सब एक ही ब्रह्म से है, तो और सब क्या है? या ब्रह्म दो हैं क्या? उनका परमात्मा अलग है, मेरा परमात्मा अलग है — उनका वाला मजबूत है, मेरा वाला कमजोर है? भाई, सब एक ब्रह्म से हैं, तो सब एक जैसे हुए; किसी ने अपने अवतार को समझा, किसी ने नहीं समझा, बस इतना सा फर्क है। पृथ्वी पर आने वाले सब एक जैसे हैं; किसी ने अपने आप को समझा, किसी ने नहीं समझा, इतना फर्क हो सकता है। वो अवतार हैं तो हम क्या हैं? हमारा भी परिचय बताओ फिर। एक तरफ कहते हो एक के अलावा दूसरा है ही नहीं — 'एको ब्रह्म द्वितीयो नास्ति' — फिर कह रहे हो वो परमात्मा तुम नहीं हो; तो मैं क्या हूँ, मेरा परमात्मा कौन है? यह सब उलझाने वाली बात है। आदि गुरु शंकराचार्य जी अद्वैत का प्रचार कर रहे थे — एक है, एक के अलावा दूसरा नहीं है। तो जब मां ने शरीर छोड़ा और गांव वालों ने अग्नि नहीं दी, उन्होंने गांव वालों को श्राप दिया। तो किसको श्राप दिया? एक के अलावा दूसरा था ही नहीं, तो श्राप किसको और किसके लिए दिया? यहां तो तुरंत तीन खड़े हो गए — एक आदि गुरु शंकराचार्य जी, एक मां, एक गांव वाले। हमें क्या जरूरत है पहेली सुलझाने की? हमें निकलना है; जिसकी पहेली, वो सुलझाए।

प्रश्न: महाराज जी, पहले मुर्गी आती है या अंडा? (P23-0025)

यार, तुम लोग मुर्गी और अंडे की बात करते हो, मुर्गा भी तो था उसमें — उसको तुम पूछ ही नहीं रहे हो, और मेन मुर्गा है। अंडा हो या मुर्गी, बिना मुर्गे के आएगी कैसे? तो मुर्गा खोजो; मूल पर आप लोग जाते ही नहीं हो, मुर्गे की बात कोई नहीं करता। तुम्हें चाहिए मुर्गी और अंडा; जब तक चाहिए, इसी मुर्गी-अंडे में घूमते रहोगे। चाहिए से मुक्त हो गए तो मुर्गा मिल जाएगा, बात खत्म। जिसे चाहिए, वो मुर्गी-अंडे में घूमे; जिसे कुछ नहीं चाहिए, वो मुर्गे से मिल गया, बात खत्म। छोड़ो — सब कुछ तो मुझसे ही है, मुर्गी भी मुझसे है, अंडा भी मुझसे है। छोड़ो, खत्म करो।

प्रश्न: प्रणाम प्रभु जी, मैं और मेरी पत्नी आपके यहां आने के लिए मुंबई से निकलेंगे। मेरी पत्नी का सवाल है — पीरियड के समय अपनों की कुटिया में क्या नियम से रहना होगा? (P23-0026)

चलिए बता देता हूं। मैं अपनी बहन के यहां रहता था; मैंने कहा भोजन बना, उसने कहा — गुरु जी, आज मैं नहीं बनाऊंगी। मैं बात तो समझ गया; बोला तू अभी क्यों नहीं बनाएगी? सुन — तेरी अशुद्धि में इतनी ताकत है कि मेरी साधना को भंग कर दे, तो मुझे ऐसी साधना भी नहीं चाहिए; मेरी साधना में इतनी ताकत है कि तेरी अशुद्धि को भी शुद्ध कर दे। तू मेरे लिए शुद्ध थी, शुद्ध है, शुद्ध रहेगी — जा, भोजन बना। तो हम मासिक धर्म, ये सब नहीं बरतते। आप मेरे लिए शुद्ध थे, शुद्ध हो, शुद्ध रहोगे; ये शरीर की क्रिया है। यहां भी किसी महिला ने अभी पुछवाया था, मैंने कहा यहां ऐसा कुछ नहीं है। मैं अपनी बहन के हाथ का भोजन करता था; फिर उसने मुझसे कभी नहीं कहा। तो भैया, आराम से आ सकते हो, हमें कोई फर्क नहीं; आपको फर्क हो तो आप देख लो। लोग बरतते हैं, हम उनको मना नहीं करते, लेकिन मैं कुछ नहीं बरतता। हम अपने जीवन में एक चीज बरतते हैं, पता है क्या? बेईमानी और दुष्कर्म — ऐसे लोगों से दूर रहता हूं, और मैं यह नहीं करता। बस, और बाकी खाओ, पियो, जियो, निकल लो — यही तो जिंदगी है।

प्रश्न: गुरु जी, एक सवाल है — मेरी मंगेतर पूरे जीवन आध्यात्मिकता की राह पर पवित्र रिश्ता निभाना चाहती है, मैं भी यही चाहता हूं, मगर अपनी भीतरी वासना से ऊपर कैसे उठ पाऊं? (P23-0027)

ईमानदारी सत्कर्म से। काम भाव आ रहा है तो करो, बेईमानी मत करो, बस बात खत्म।

प्रश्न: गुरुदेव, आपका कथन सही है कि व्यक्ति कामनाओं, मोह और उनके बंधनों में फंसा हुआ है। तो जो व्यक्ति दिन भर ईमानदारी से मजदूरी करके अपने परिवार का पेट भरता है, क्या वह मुक्त है, या कुछ और मार्गदर्शन करें? (P23-0028)

अब देखो, अगर ईमानदारी से कर रहा है तो मुक्त तो है; पिछला तब हटेगा जब वह सत्कर्म भी करेगा। दोनों जरूरी हैं।

प्रश्न: गुरु जी, क्या बिना संन्यास के भी आत्मा का परमात्मा से मिलन हो सकता है? अगर हो सकता है तो कैसे? कृपया विस्तार से बताएं। (P23-0029)

संन्यास का मतलब — अपनी बुराइयों का नाश कर देना, यही संन्यास है।

प्रश्न: गुरु जी, क्या जीवन में गुरु दीक्षा एक बार ही लेनी चाहिए, एक बार ही गुरु मंत्र लेना चाहिए? (P23-0030)

गुरु ज्ञान का प्रतीक है। मैं आपको कहानी बता रहा हूँ, इससे समझ में आएगा। दीक्षा ले तो लिया, तीसरे दिन आश्रम छोड़ा, फिर आना-जाना लगा रहा। गुरु जी बोले — तू माला भी नहीं जपता। मैंने कहा, इतने लोग जप रहे हैं, सालों से जप रहे हैं, इतने लोगों को देख रहा हूँ; जब आपने मंत्र दिया और इनका ही कुछ नहीं हुआ, तो मेरा कैसे होगा? तो मैंने गुरु मंत्र नहीं जपा, क्योंकि मुझे समझ में आ गया कि इससे कुछ होगा नहीं। फिर हम प्रसाद लेने जाते थे, ऐसे ही पांच छू लेते थे; बोले, आज तक माथा टेकना नहीं आया। हमने कहा — जितने लोगों को आया, उनका क्या हुआ? एक तो ऐसे ही हम फंसे हुए हैं, और आप नई-नई विधियों में उलझा रहे हो; अब यह माथा टेकना सीखने आए हैं कि कल्याण के लिए? हम यहां निकलने के लिए आए हैं आपके पास; हमारा जितना भाव है, उससे आपको प्रणाम कर रहे हैं, बस।

प्रश्न: गुरु जी प्रणाम, मिट्टी का घड़ा जब तक अग्नि में नहीं तपता, तब तक पक्का नहीं होता। क्या मनुष्य बिना त्याग-तपस्या किए ज्ञान प्राप्त कर लेगा? (P23-0031)

आओ यहां, सत्संग में बैठ लो — उतना ही पक जाओगे; आओ, यहां बैठ जाओ। यहां आने वालों से पूछो, कितने लोग इंतजार करते रहते हैं कि कब सत्संग खत्म हो, कितने लोग झूलते रहते हैं — लेकिन मैं छोड़ने वाला नहीं। फिर मिलो या ना मिलो, हमें कोई फर्क नहीं पड़ेगा, लेकिन गलती से भी मिल गए हो तो चमका तो दूंगा, ये पक्का है। अब आए हो तो सुनना तो पड़ेगा, चाहे आप चाहो चाहे ना चाहो, क्योंकि मुझे मालूम है कि सुनने में ही आपका कल्याण है। आज मुझे गाली दे सकते हो, लेकिन आपको कभी न कभी समझ में आएगा। गाली ही सही, लेकिन मैं आपके काम आ जाऊँ — बस यही मेरी जिंदगी है।

प्रश्न: गुरु जी, 'कुछ नहीं चाहिए' में कैसे आएँ? अपने आप में कैसे रहें, ज्ञान कैसे हो? और पार कैसे होंगे? (P23-0032)

उम्मीद छोड़ दो। अज्ञानता को छोड़ दो, उम्मीद को छोड़ो। उम्मीद में गए हो, उम्मीद में वापस आ जाओ — बस इतनी सी बात है।

प्रश्न: स्वामी जी, क्या साक्षी को देखना भी गलत है? और साक्षी को कैसे देखते हैं, थोड़ा प्रकाश डालिए। (P23-0033)

ऐसा नहीं है — ना गलत है ना सही है; ईमानदारी सत्कर्म से काम करो। साक्षी को नहीं देखते हैं; काम करते हुए साक्षी भाव से देखते हैं। करने वाला और देखने वाला एक ही है, बस वह अपने को अलग बना के रखता है कि मैं कर भी रहा हूँ और जांच भी रहा हूँ कि कोई गलती ना हो जाए — इसी को साक्षी भाव कहते हैं।

प्रश्न: गुरु जी, जीवन का उद्देश्य क्या होना चाहिए? क्या स्वामी विवेकानंद जैसा संन्यासी होना चाहिए? (P23-0034)

दो भाव होते हैं — या तो आप अपना कल्याण कर लो, या तो जगत कल्याण कर लो; जिस भाव में आपको जीना है।

प्रश्न: गुरु जी, परिवार के लोग बेईमानी करें तो उनसे कैसे व्यवहार करें? (P23-0035)

आप मत करो, उन्हें करने दो।

प्रश्न: गुरु जी, शाश्वत क्या है — यह जानना है, और उस भाव में टिके रहना है।

(P23-0036)

बस जानने से मुक्त हो जाओ, शेष शाश्वत बचेगा, और क्या बचेगा।

प्रश्न: गुरु जी, ब्रह्मचर्य कैसे लाऊँ? उम्र में आपसे बड़ा हूँ, 46 साल का हूँ, लेकिन आपसे बहुत छोटी सोच महसूस करता हूँ। (P23-0037)

ईमानदारी अपना लो और सत्संग सुनते रहो; धीरे-धीरे शरीर का भी ब्रह्मचर्य आने लगेगा।

प्रश्न: गुरु जी, शरीर के नौ दरवाजे कौन से हैं? विस्तार से बताइए। (P23-0038)

दो कान, दो आंख, दो नाक, एक मुंह, एक लिंग, एक गुदा। जब नौ दरवाजों में हाथ लगाओ तो हाथ धो लेना चाहिए। इससे सचेतता बढ़ती है, एकाग्रता बढ़ती है — यह बहुत जरूरी है। अगर आपने भगवद्गीता का अध्ययन किया होगा, उसमें बोला भी गया है कि बाहर की स्वच्छता से आंतरिक स्वच्छता होती है। अब ऐसे लोग आते हैं — बाथरूम वहां करेंगे और मटके पर जाकर हाथ धोते हैं; इन्हें इतना भी नहीं पता है कि शौच जाने के बाद, मल-मूत्र का त्याग करने के बाद हाथ कहां धोना चाहिए। वो पीने वाला पानी है; हाथ तो जाकर नल पे धोना चाहिए। ये हालत है समाज की, और ये अपने आप को साधक कहते हैं। कितने लोग तो धोते ही नहीं। लेकिन नहीं पता था, अब तो कम से कम अपनाओ — मल-मूत्र का त्याग करने के बाद हाथ-पांव धोना बहुत जरूरी है।

प्रश्न: गुरु जी, क्या वैराग्य के लिए घर वालों की अनुमति आवश्यक है? (P23-0039)

अब देश-काल-स्थिति-परिस्थिति देखो — आप पर लोग निर्भर हैं क्या?

प्रश्न: गुरु जी, जब 'कुछ नहीं चाहिए' में आना है, तो फिर जो चाहिए उसके लिए काम कैसे करें? फिर से हम 'कुछ चाहिए' में आ जाएंगे। (P23-0040)

इसे गहराई से समझो — जरूरत में जीना। जरूरत के लिए अगर कर रहे हैं, तो आप 'कुछ नहीं चाहिए' में जी रहे हैं। जरूरत से ज्यादा के लिए कर रहे हैं — बस वही 'कुछ चाहिए' है, उसी से तकलीफ है।

प्रश्न: गुरु जी, अगर एक संन्यासी को अपना मातृ ऋण चुकाना हो, तो कैसे चुकाए?

(P23-0041)

मातृ ऋण होता ही नहीं; जरूरत पड़ने पर उनकी सेवा करो, बात खत्म। मातृ ऋण, पितृ ऋण और गुरु ऋण होता ही नहीं — बस जरूरत पड़ने पर उनकी सेवा करो। उनको भी उनके माता-पिता ने कहा, यह चली आ रही है। अब जैसे मैं आज यह ज्ञान दे रहा हूँ, तो मेरी भी तो कहीं-कहीं प्रकृति गुरु बनी; तो यह ऋण नहीं होता। सबका अपना-अपना पद है और सबका अपने पद का काम है; ऋण नहीं होता। डरा के सेवा मत कराओ — लोग डरा के कराना चाहते हैं कि सेवा नहीं करोगे तो पाप लगेगा। डराओ मत, सीधा-सादा कहो: मात-पिता ने बचपन में आपका पालन-पोषण किया, उन्हें जरूरत पड़ने पर — अगर कोई भाई है तो ठीक है, नहीं तो — आप उनकी सेवा करो। अच्छा, मात-पिता छोड़ दीजिए; अगर आपके पास कोई ऐसा व्यक्ति रहा जिसका कोई नहीं है, और पता चला वो आप ही के यहां रह गया, तो उसकी भी सेवा करो। बात है जरूरत की; लेकिन यहां क्या है, डरा-धमका के करवाना चाहते हैं।

प्रश्न: गुरु जी, सत्य क्या है? (P23-0042)

'क्या है' से मुक्त हो जाओ — सत्य है। 'क्या है' को पूछने वाला सत्य है।

प्रश्न: गुरु जी, मैंने एक हिंदू लड़के से प्रेम किया था; उसने मेरा धर्म परिवर्तन करके मुझे छोड़ दिया और चला गया। अब मैं क्या करूँ? मेरा मार्गदर्शन करें। (P23-0043)

तो अब यह आप ही को फैसला लेना है कि क्या करना है। आप उधर जा सकते हो तो इधर आ सकते हो, इधर जा सकते हो तो उधर — यही तो है। और मैं तो कह रहा हूँ, अपना कल्याण कर लो — यह जीवन में मौका मिला है, तो रसपान से दूर हो जाओ और अपना आत्मिक कल्याण कर लो। हो गया भोग-विलास; लेकिन समझ में आए तो।

प्रश्न: गुरु जी, खत्म क्यों करना है अपने आपको? इस जन्म में आया हूं, तो कर्म के बिना तो रह नहीं सकते। (P23-0044)

तो मत खत्म करो ना, कौन कह रहा है? हम तो कह रहे जिसको खत्म करना है वो आए; व्यक्तिगत हम थोड़ी कर रहे हैं, तो आप मत आओ। खत्म करने का मतलब है अपनी बुराइयों का नाश कर देना। अज्ञानता — अज्ञानता को आपने धारण किया है, उस अज्ञानता से अपने आप को छुड़ा लेना, अज्ञानता का नाश कर देना, विकारों का नाश कर देना — खत्म करने का मतलब यह है।

प्रश्न: गुरु जी, चक्रों पर केंद्रित होना है या नहीं? (P23-0045)

ईमानदारी सत्कर्म करो। चक्र क्या दिख रहे हैं, जो केंद्रित करोगे? अरे वो भी तो एक कल्पना है — किसी को कोई चक्र दिखा? कल्पनाओं में तो लोग आपको घुमा रहे हैं। मैं तो कह रहा हूं — चक्र, अच्छा चलिए सात क्या, सात हजार, सात लाख, सात करोड़, सात अरब, संख-पदम ले लो, इतने चक्र हों — ठीक है, कैसे बंद हुए? बेईमानी-दुष्कर्म से। ईमानदारी-सत्कर्म अपना लो, सब खुल जाएंगे, पट-पट-पट। इतनी बात समझ में नहीं आ रही है? ताला जिस चाबी से बंद होता है, उसी से खुलता है। साफ-सुथरी बात।

प्रश्न: गुरु जी, पहले भाव बनता है कि एकांत में जाएं, वहां हम अपनी साधना अच्छी तरह से कर पाएंगे; लेकिन जब एकांत मिलता है, सानिध्य मिलता है, तो वहां व्याकुलता होती है, भागने का मन होता है। ऐसा क्यों? हम एकांत को बर्दाश्त क्यों नहीं कर पाते? (P23-0046)

इसलिए कि जब आप एकांत में जाते हो — एकांत का मतलब अपने आप में रहना — और जब आप अपने आप में रहते हो तो आपको चाहिए रसपान, और रसपान मिल नहीं पाता। शब्द, दृश्य, गंध, रस, स्पर्श — पांच इंद्रियों द्वारा आप रसपान करते रहते हो, और एकांत में जब वह नहीं मिल पाता तो एकांत से आप भाग लेते हो। एक-दो दिन तक एकांत अच्छा लगता है, इसके बाद आप ऊबने लगते हो, बोर होने लगते हो, घुटन होने लगती है, पीड़ा होने लगती है, फिर भाग जाते हो। एकांत में आने के बाद भी वह एकांत वास को तोड़ना चाहता है, फिर लोगों से रस भरी बातें करना चाहता है। अगर वो मिल जाए तो वहां रुक जाए और समझेगा कि मैं एकांत में हूँ — तो एकांत रहा कहां? जब आपस में रस भरी बात कर ली, एक-दूसरे को देख के मुस्कुराने लगे, तो एकांत गया, राग हो गया। अगर आप एकांत में हो तो किसी को देख के कोई भी प्रतिक्रिया ना दो — शारीरिक और मानसिक — तब आप एकांत में हो। एकांत में वही व्यक्ति रह सकता है जिसे कुछ नहीं चाहिए। जिसे कुछ भी चाहिए वह एकांत को बर्दाश्त नहीं कर पाएगा। इसलिए तो मैं कहता हूँ, कुछ नहीं चाहिए तो आना, समय बर्बाद मत करो — आपका भी समय बर्बाद होगा, सामने वाले का भी। अगर कुछ चाहिए तो पहले उसे पूरा कर लो, निपटा दो, नहीं तो एक-दो दिन में भाग जाओगे।

प्रश्न: गुरु जी, कर्मों की बेईमानियां तो समझ में आई कि कर्मों में कहां-कहां बेईमानियां होती हैं, कैसे होती हैं; पर हमारी जो पांच इंद्रियां हैं, उनसे हम जो बेईमानियां करते हैं वे कौन-कौन सी होती हैं? जरा उस पर विस्तार से बताइए।

(P23-0047)

सबसे ज्यादा भोग करते हैं आंखों से। पुरुष सबसे ज्यादा आंखों से भोग करता है। फिर भीड़ में स्पर्श से — जैसे बस में, ट्रेन में भीड़ में यात्रा करो, सामने स्त्री है, वह कह रही है जरा पीछे हटिए, और आप बोलते हो क्या करें, भीड़ है। आंखों से भोग तो आप कहीं भी करते हो। सबसे ज्यादा ऊर्जा खर्च होती है आंखों से — आंखों से व्यक्ति बहुत भोग करता है — फिर इसके बाद मानसिक भोग में। आंखों के भोग में और मानसिक भोग में सबसे ज्यादा ऊर्जा खर्च होती है। फिर बोल के, सुन के; फिर स्वाद से; स्पर्श इंद्रिय से बहुत कम भोग होता है। यही कारण है कि इंद्रियों को जो रस चाहिए वह एकांत में नहीं मिलता — ना आंखों को भोग है, ना शब्द है — इसलिए एकांत में नहीं रह पाते। एकांत में वही रह सकता है जिसे कुछ नहीं चाहिए।

प्रश्न: गुरु जी, जैसे आपने बोला कि पुरुष आंखों से भोग करता है — महिलाओं का क्या? महिलाएं किसका भोग करती हैं? (P23-0048)

महिलाएं अतीत का भोग करती हैं। महिलाएं सबसे ज्यादा अतीत का भोग करती हैं, उन्हें पुरानी यादें बहुत सताती हैं। पुरुष को तो बस नया चाहिए, पुराना वह फट से भूल जाता है। स्त्री नए में जाने में बड़ा सकपकाती है, पहले वह पुराने को नहीं छोड़ पाती। पुरुष हमेशा आगे जाने के लिए तैयार है, उसे बस उससे अच्छा मिलना चाहिए; उससे अच्छा मिलेगा तो तुरंत पीछे वाले को छोड़ने के लिए तैयार हो जाता है। इसलिए तो आत्मज्ञान के लिए वह सब कुछ छोड़ के भी घर से जल्दी निकल जाता है — पक्का देख लिया कि इसमें कुछ नहीं है, छोड़ो इसे — बहुत तेज फैसला लेता है। महिलाएं जल्दी नहीं निकल पातीं, वे पुरुष की ऊर्जा को संभालने में लग जाती हैं; वे पुराने को जल्दी छोड़ नहीं पातीं, उसी में घूमती रहती हैं। पुरुष के लिए अतीत को छोड़ना बहुत आसान है, महिलाएं अतीत में ज्यादा जीती हैं, उनसे जल्दी नहीं छूटता। (वैसे एकांत तो सबके लिए है — साधक कहो चाहे साधिका, कोई भी एकांत में रह सकता है।)

प्रश्न: गुरु जी, एकांत वास कितने समय तक करना चाहिए? और उपलब्धि का मतलब क्या है? (P23-0049)

जब तक उपलब्धि ना हो जाए। मैं इसलिए तो कह रहा हूँ — निकलिए तो पूरी तरह निकलिए। उपलब्धि मतलब स्वयं की उपलब्धि — तब तक एकांत में रहो जब तक अपना आत्मज्ञान, आत्मदर्शन ना हो जाए; अगर पूरी तरह यात्रा के लिए निकल गए हो तो। नहीं तो, जैसे परिवार है, उसके भरण-पोषण के आप जिम्मेदार हो, तो 12 महीने में एक महीना तो एकांत देना ही चाहिए। हर व्यक्ति को 11 महीने परिवार को दो, उनका भरण-पोषण करो, और एक महीने की छुट्टी तो जीवन में अपने लिए लो — एक महीना आपको अपने को देना ही चाहिए।

प्रश्न: गुरु जी, एकांत में खान-पान का भी विशेष ध्यान देना पड़ता है क्या? क्या पेट भर भोजन नहीं करना चाहिए? (P23-0050)

खानपान तो बहुत मूल है। पेट भर, जितने में शरीर चल जाए, उससे ज्यादा ना खाओ, क्योंकि एकांत में मेहनत तो कर नहीं रहे हो। जितना समय आप रह रहे हैं, बस उतना खाइए जितने में आप जी सकें। ज्यादातर ऊर्जा को तो हम भोजन पचाने में खर्च कर देते हैं। भोजन का बहुत महत्व है — भोजन आप उतना करिए जितने में आपका शरीर चल सके; अत्यधिक भोजन नहीं करना चाहिए। हो सके तो जब तक एकांत में रहो, पेट भर भोजन ना करो, नहीं तो आलस्य रहेगा। शरीर को भोजन पचाने में सबसे ज्यादा ऊर्जा खर्च होती है। कम खाने वाले व्यक्ति को आप स्वस्थ पाओगे, देख लेना; ज्यादा खाने वाले व्यक्ति अस्वस्थ रहते हैं।

प्रश्न: गुरु जी, ब्रह्मचर्य के जीवन में क्या-क्या फायदे हैं? (P23-0051)

ईमानदारी ब्रह्मचर्य है। आप क्या करते हो, ऊर्जा का किस तरीके से उपयोग करते हो — वो मायने रखता है। ₹100 मिला — आपने उसका दूध पिया, काजू-बादाम खाया, कि पता चला क्वार्टर पी के सो गए? बात यह है कि ऊर्जा का खर्च आपने किस तरीके से किया।

प्रश्न: गुरु जी, गृहस्थ में रहकर मुक्ति पाने के लिए कोई सरल उपाय बताइए।

(P23-0052)

ईमानदारी मुक्ति है, बेईमानी बंधन है। जहां भी आप रहें, ईमानदारी अपना लें, और ईमानदारी अपनाते हुए अपने आप को सत्कर्म में लगा दें — मुक्ति से मोक्ष तक पहुंच जाएंगे। घर में रहकर भी: ईमानदारी, सत्कर्म — भूखे को भोजन, प्यासे को पानी — आंतरिक ईमानदारी, मेहनत; और मेरे कर्म से किसी को तकलीफ ना हो, क्योंकि हो तो उसका जिम्मेदार मैं होऊंगा — यह आपको पता होना चाहिए।

प्रश्न: गुरु जी, किसी की बातों से और व्यवहार से दुख पहुंचता है, और वह पद में मुझसे बड़े हैं और रोज उनके साथ काम भी करना है — ऐसी स्थिति में क्या करना चाहिए? (P23-0053)

आप अपने पद का काम करिए, उनसे व्यवहारिक रिश्ता ना बनाइए। जिस पद पे आपको रखा गया है उस पद का कोई काम है, उस काम को करिए। उनसे व्यवहारिक रिश्ता बनाने की कोई जरूरत नहीं है — व्यवहारिक मत बनिए।

प्रश्न: गुरु जी, कपड़े का धंधा है, उसमें झूठ तो बोलना ही पड़ता है। कृपया मार्गदर्शन करें। (P23-0054)

कोई झूठ बोलने की जरूरत नहीं है। आप जिस भाव में माल ला रहे हैं उससे ज्यादा में बेचना होता है — यही व्यापार का नियम है। बस जिस माल को बता रहे हैं, माल वही निकलना चाहिए; माल में धोखाधड़ी मत करना। सीधी सी बात है — अपने खर्च, किराया-भाड़ा और अपनी मजदूरी को जोड़ते हुए उचित दाम में बेचो।

प्रश्न: गुरु जी, आपने कहा था कि किसी का साथ दो तो अंत तक निभाओ। शादी में हम साथ-साथ का वचन लेते हैं — तो आध्यात्म में आने के लिए घर वालों को कैसे छोड़ें? (P23-0055)

तो मत छोड़ो ना। उनसे पूछो, उनको लेकर चलो। कौन बोल रहा है छोड़ो? आध्यात्म का मतलब है अपने आप को सुधारना। आप जहां भी सुधार सकते हो, सुधारो। कहीं भी रहो, ईमानदारी-सत्कर्म अपना लो।

प्रश्न: गुरु जी, घर पर रहकर एकांत कैसे संभव करें? (P23-0056)

जरूरत में जीना चालू करो। बिना मतलब की बातें बंद कर दो — जितनी काम की बातें हों उतनी करो। जब भी आप किसी से बातचीत या लेनदेन कर रहे हो, जरूरत है तो करो, नहीं तो मत करना। लेकिन ये करना आसान नहीं है, आप समझ लेना — इतना आसान नहीं है।

प्रश्न: गुरु जी, क्या हमारे जीवन में जो भी घटित होता है वह पहले से निश्चित होता है? (P23-0057)

सब फिक्स है। और फिक्स करने वाले आप ही थे — आपके कर्म के द्वारा आप फिक्स करते हो। आपने जैसा कर्म किया वैसा आपके लिए फिक्स हो गया; लेकिन अब आपको पसंद नहीं आ रहा है तो फिर से फिक्स करने लगे, और उसमें फंस गए। पिछला भी आप ही ने फिक्स किया था, अभी भी आप ही फिक्स कर रहे हो — मतलब करता भी तुम ही हो, धरता भी तुम ही हो। तुम शादी करते हो — पत्नी बहुत अच्छी है, पति बहुत अच्छा है — बाद में तलाक भी तुम ही दोनों करते हो। शादी भी तुम्हीं दोनों ने किया, तलाक भी तुम्हीं दोनों कर रहे हो।

प्रश्न: गुरु जी, क्या एकांत में हम सत्संग सुन सकते हैं? या एकांत में बस सत्संग ही होना चाहिए? (P23-0058)

हां, सुन सकते हैं, वैसे तो ऊर्जा बढ़ेगी। सत्संग तो जीवन में सबसे जरूरी है — जैसे शरीर के लिए भोजन, वैसे आपके लिए सत्संग। सत्संग तब तक सुनते रहिए, तब तक सत्संग में जियो, जब तक उपलब्धि ना हो जाए। उपलब्धि के बाद तो छूट जाएगा, तब जरूरत ही नहीं है। सत्संग सुनने का ऐसा कोई नियम नहीं है; जीवन में सबसे जरूरी है ईमानदारी-सत्कर्म।

प्रश्न: गुरु जी, क्या आत्मज्ञान ही सही ज्ञान है? (P23-0059)

सही-गलत की बात नहीं है। आत्मज्ञान मतलब खुद का ज्ञान। उसी के लिए तो राग-द्वेष से मुक्त होना है।

प्रश्न: गुरु जी, वर्तमान में कैसे जिएं? (P23-0060)

वर्तमान में जीवन नहीं होता है। वर्तमान में हो सकते हो, जी नहीं सकते। जीवन तो या तो अतीत में होगा या भविष्य में। जैसे ही जिए, अतीत और भविष्य में चले गए। वर्तमान में कैसे होंगे? अगर कर्ता का भाव नहीं होगा, कुछ नहीं चाहिए, तो आप करते हुए भी वर्तमान में हो; कुछ चाहिए तो आप वर्तमान में नहीं हो। अगर आप सोच रहे हैं कि आगे की प्लानिंग है या पीछे की — यह बात कर्ता की है, "मैं कर रहा हूँ"। जब आप किसी से बात कर रहे हो, उससे आपको कुछ नहीं चाहिए; किसी भी कार्य को आप कर रहे हो, उस कार्य से आपको कुछ नहीं चाहिए, सामने वाले के लिए कर रहे हो, उससे आपको कोई बेनिफिट नहीं लेना — तब आप कार्य करते हुए भी वर्तमान में हो। इसलिए जितने भी महात्मा पुरुष, संत हैं, वे सत्संग करते हुए, लोगों के लिए कार्य करते हुए वर्तमान में रहते हैं — अपने आप में रहते हैं, आनंद में रहते हैं, बाहर जाते ही नहीं, लिप्त ही नहीं होते। आप लिप्त हो गए तो वर्तमान में नहीं हो, और लिप्त तब होंगे जब आपको चाहिए। आपको कुछ नहीं चाहिए तो आप कर रहे हैं तब भी लिप्त हैं ही नहीं — करके भी आप अपने आप में हैं। इस स्थिति में हमें पहुंचना है।

प्रश्न: गुरु जी, जैसे हम ड्राइव कर रहे हैं, गाड़ी चला रहे हैं, यात्रा में जा रहे हैं — उस समय इंसान का दिमाग प्रेजेंट में ना होकर या तो पास्ट में जो हो चुका उसमें होता है, या फ्यूचर के सपनों में। तो इस मोमेंट में स्थिर होकर काम कैसे करें? (P23-0061)

जब उस काम से कुछ नहीं चाहिए, तभी आप हो सकते हो, नहीं तो नहीं रह सकते। अगर कुछ चाहिए तो आपको बाहर ही जाना पड़ेगा। यह कैसे होगा? जरूरत में जियो। जरूरत में ज़िओगे तो जरूरत पूरा करने के लिए बाहर जाओगे, और जैसे ही जरूरत पूरी होगी, अंदर आ जाओगे — अपने आप में आ जाओगे। कुछ नहीं चाहिए तो अपने आप में रहोगे — "मिनिमम से मिनिमम" नहीं, कुछ नहीं। अगर आपको जरूरत से ज्यादा चाहिए तो आप राग-द्वेष में चले जाएंगे, फिर वापस नहीं आ पाएंगे, फिर वर्तमान में नहीं रह पाएंगे। राग-द्वेष वाला व्यक्ति हमेशा या तो भूत में रहता है या भविष्य में; वर्तमान में नहीं रह पाता।

प्रश्न: गुरु जी, विकारों को दृष्टा बनके कैसे देखें? (P23-0062)

विकार आ रहे हैं — देखना नहीं है, विकार आने वाला काम ही मत करो ना, सीधी सी बात है। क्या देखोगे? अभी तक भी तो देख ही रहे थे — लाते-लाते देख ही तो रहे हो। जीवन में जितनी भी बेईमानी, दुष्कर्म हुआ, उसके द्वारा विकार आए, तो आप ही ने तो देखा — दूसरे तो देख भी नहीं पाए। अब निर्विकार होने के लिए काम करो: ईमानदारी-सत्कर्म अपना लो, जरूरतमंद की सेवा करो, परोपकार में अपने आप को लगा दो।

प्रश्न: गुरु जी, विकारों से बचें कैसे? जैसे किसी का ड्रिंक करने का मन हो रहा है, स्मोक करने का मन हो रहा है — यह एक विकार है, अब वह उसके दिमाग में आया तो उससे वह कैसे बचेगा? इसके लिए तो सेल्फ कॉन्फिडेंस, विल पावर होना जरूरी है? (P23-0063)

बेईमानी मत करो बस, और योग्यता से ज्यादा पाने की उम्मीद का त्याग करो। ड्रिंक का मन हो रहा है तो मत पिए ना। कार्यों के लिए, कमजोर के लिए हम थोड़ी ना बोल रहे हैं — तुम कहोगे मन नहीं मान रहा है, तो जाओ पियो, परिणाम भोगो। इसमें विल पावर की क्या जरूरत है? समझ की जरूरत है। सबसे जरूरी है भोजन, तन पे कपड़ा, सांस — इसमें विल पावर की, आत्मविश्वास की क्या जरूरत है? आपके पास समझ होनी चाहिए कि इसकी मेरी जिंदगी में जरूरत ही नहीं है। मत पीजिए, और पियो तो भोगो। केवल किसी एक चीज की बात नहीं कर रहा — जितने बुरे काम हैं, मत करो ना। काम-क्रोध मत करो। क्या जरूरत है करने की? समझ के चलिए, उचित-अनुचित देख के जीवन जियो; नहीं तो फिर उसका परिणाम भोगो।

प्रश्न: गुरुदेव, ट्रेन की बोगियों में विकलांग लोग आते हैं, पैर से दिखते भी हैं कि विकलांग हैं, लेकिन बाहर जाने के बाद मद का सेवन जैसे अनर्गल काम करते हैं — तो उन्हें पैसा देना क्या सही होता है? (P23-0064)

नहीं देना चाहिए। खाने वाला सामान दे दो — वो भी पैकेट खोल के, बिस्कुट दो तो खोल के दो, ताकि बेच ना पाए। नहीं ले तो मत दो, रख लो, आप खा लो, कुत्ते को खिला दो। ऐसे लोगों को मत दो — जरूरतमंद को दो।

प्रश्न: गुरु जी, अहम को हटाना, मान की इच्छा का त्याग करना इतना कठिन है — अगर किसी परिस्थिति में वह भाव इंसान में आ भी जाता है तो क्या करें?

(P23-0065)

समझ से, समझदारी से उसे हटाओ। प्रतिक्रिया मत दो, सह लो — इसी को कहते हैं अपमान का घूंट पीना। पी लो कि नहीं, मुझे अपने आप को सुधारना है। देखिए, दो में से एक करो: या तो खुद पे अनुशासन करने की ताकत हो, या तो अनुशासन करने वाले व्यक्ति के पास रहो — लेकिन वो व्यक्ति महान होना चाहिए; अगर आपसे कमजोर का अनुशासन आप पर हो गया तो आप बर्बाद हो जाओगे। खुद पर अनुशासन करने वाले करोड़ों में एकाध होते हैं। नहीं तो आपके ऊपर कोई अनुशासन करने वाला चाहिए — फिर वहां से भागो मत। वो अनुशासन करेगा तो आपको बहुत तकलीफ होगी, फिर भी भागो मत, समझदारी से अपने आप को रोक के रखो, क्योंकि अपने आप को सुधारना है। वो तो तुरंत कहेगा "जाओ" — योग्य व्यक्ति तुम्हें रोकेगा भी नहीं, क्योंकि उसको तुम्हारी जरूरत ही नहीं है, जरूरत तुमको है। एक अच्छे शिक्षक के पास विद्यार्थी की कमी नहीं होती। बड़े सर्जन के पास देख लो — काम के अलावा कोई बात नहीं करेंगे, वहां जाने के लिए लाइन लगानी पड़ती है। सामर्थ्यवान, योग्य व्यक्ति किसी के पीछे नहीं भागते। और सफलता कोई उठा के नहीं दे देगा, यह दुकान पर नहीं बिकती — उसके लिए आपको अथाह मेहनत करनी पड़ेगी। इसलिए सोच-समझ के जीवन का फैसला लो, आवेश-जज्बात में नहीं; यह आवेश-जज्बात का मार्ग नहीं है, यह बहुत समझदारी का मार्ग है।

प्रश्न: गुरु जी, कुंडलिनी जागरण जैसी कोई चीज है या नहीं? (P23-0066)

हमसे उससे कोई मतलब नहीं। मुझे बस इतना अपना मतलब है कि अपना कल्याण कैसे होगा। और वह कल्याण करने के लिए ईमानदारी-सत्कर्म, और योग्यता से ज्यादा पाने की इच्छा का त्याग।

प्रश्न: गुरु जी, जैसे आपने कहा कि अपनी इच्छा के अनुसार कोई चीज नहीं मिलती तो हमें गुस्सा आता है। अब एक परिवार में जैसे पांच लोग हैं, उसका जो मुखिया होगा वह तो चाहेगा ही कि मेरे हिसाब से काम हो — जरूरी भी है, क्योंकि कुछ काम उसके हिसाब से ही सही होते हैं। नहीं होगा तो उसे गुस्सा आएगा। इस परिस्थिति में क्या करें? (P23-0067)

अपने हिसाब से काम नहीं करना चाहिए, काम को काम के हिसाब से करना चाहिए — कभी भी जिंदगी में, चाहे वो गार्जियन हो चाहे परिवार का कोई भी सदस्य। गार्जियन एक पद है; पहले तुम्हारे पिताजी गार्जियन थे, उनके पहले दादाजी, तुम्हारा पद भी तुम्हारा बेटा छीन ले सकता है। यहां सब एक पद है — उस पद का काम करो, ना अच्छा बनने के लिए ना बुरा बनने के लिए, बस जिम्मेदारी से। बात यहां सही-गलत की नहीं है; सही-गलत के लिए काम करोगे तो फंस जाओगे। चपरासी से ले, मास्टर, प्रिंसिपल, मैनेजर — सबका काम है; ऐसे ही घर में गार्जियन का काम है, उसे गार्जियन के तरीके से करें, उसमें अपनी मिलावट ना करें। यही तो गड़बड़ी हो जाती है — गार्जियन खुद तंबाकू खाते हैं और बच्चों को रोकते हैं, खुद दारू पीते हैं और बेटे को नहीं पीने देते — यह कौन सा गार्जियन है? खुद गलत करेंगे और परिवार को दबाएंगे। सबसे पवित्र, शुद्ध गार्जियन होना चाहिए, उसी से तो परिवार प्रेरणा लेता है।

प्रश्न: गुरु जी, अगर जैसे कोई डॉक्टर है — वह उस सिस्टम में काम ना करे जो लोगों ने बना दिया है, जो गलत है, तो क्या करे? (P23-0068)

तो मत करे ना। इससे अच्छा डॉक्टरी का वो पैसा छोड़ दो। क्या गलत ही करना है? डॉक्टर का काम गलत करना है — ये कौन सा सिस्टम है? पेट के लिए रोटी चाहिए, कहीं भी मिल जाएगी; रोटी के लिए क्या बेईमानी करनी है? लोगों को लूटो — ये भी कोई सिस्टम है? समाज सबसे ज्यादा सीखता है चार से — मात-पिता, शिक्षक, डॉक्टर और गुरु। इन चार को हमेशा शुद्ध जीवन जीना चाहिए, क्योंकि चारों से लोग प्रेरणा लेते हैं और चारों को लोग भगवान का स्वरूप मानते हैं। और ये चारों इस समय गंदगी फैला रहे हैं — अपने बच्चों का भरण-पोषण बेईमानी के ढंग से कर रहे हैं, शिक्षा का व्यापार कर दिया गया है, डॉक्टर बस पैसा कमाने में लगे हैं, गुरु बनके लोग अध्यात्म को बेच रहे हैं। 99% भ्रष्ट हो गए हैं, इसलिए समाज की इतनी दुर्दशा है, बेईमानी चरम सीमा पे है। जिंदगी की शुरुआत मात-पिता से है, फिर शिक्षक, डॉक्टर के पास आना-जाना, फिर गुरु के पास — ये चार अगर सुधर जाएं तो पूरा समाज सुधर जाएगा। इन चारों का ईमानदार और सत्कर्मी होना, इनके अंदर परोपकार होना बहुत जरूरी है। इसलिए आज वृद्ध आश्रम बढ़ते जा रहे हैं — 30 साल पहले गरीबी थी, लेकिन लोग अपने मां-बाप के साथ रहते थे। इसमें बच्चे जिम्मेदार नहीं, मात-पिता जिम्मेदार हैं, क्योंकि उन्होंने अपने बच्चों का भरण-पोषण बेईमानी के धन से किया। बेईमान भी बेईमान को अपने घर में रखना नहीं चाहता — बेईमान आदमी को भी घर में नौकर चाहिए तो ईमानदार चाहता है, बेईमानी करते पकड़ा गया तो धक्के मार के निकाल देता है। इसलिए जीवन में इस समय सबसे जरूरी है ईमानदारी और सत्कर्म। अपने आप को सुधारो — दूसरों को सुधारने में मत लगे।

प्रश्न: गुरु जी, जीवन को कैसे जिएं जिससे कि अंत में राग-मोह ना हो? (P23-0069)

ईमानदारी और सत्कर्म के साथ। योग्यता से ज्यादा पाने की इच्छा का त्याग करो, और लेने का भाव छोड़ के देने का भाव बना लो — मोह नहीं होगा।

प्रश्न: गुरु जी, क्या सिमरन और ध्यान एक हैं? हम जिस गुरु की शरण में हैं उन्होंने ध्यान करने से मना किया है, केवल सिमरन बताया है — क्या यह सही है?

(P23-0070)

ध्यान से भी मुक्त हो जाओ। सुमिरन भी करो तो यह करो कि मैं अपने कर्मों को भोगने के लिए तैयार हूं, और ईमानदारी-सत्कर्म अपना लो।

प्रश्न: महाराज जी, "जरूरत" समझ में नहीं आई — जरूरत किसे कहें? (P23-0071)

जितनी आपकी आवश्यकता है — भूख लगी तो भोजन, तन पे कपड़ा। जियो जीने के लिए; जितने में आप जी सकते हो, वही जरूरत है।

प्रश्न: गुरु जी, अभेद होते हुए भी भेद क्यों लगता है? अभेद का मतलब एक जैसा, भेद का मतलब अलग-अलग — तो अंदर से सब एक जैसा है, लेकिन बाहर से तो अलग-अलग है ही? (P23-0072)

यहां सब बैठे हैं — शरीर में तत्व वही है, लेकिन बाहर से रूप बदला हुआ है। यह रूप पहले नहीं था, बाद में नहीं रहेगा, लेकिन अभी तो है, तो हम रूप में फंसे हुए हैं। रसपान करना छोड़ दो, अभेद हो जाएगा, बात खत्म। दूर से देखा, फल की दुकान थी — सब फल दिख रहे थे। पास गए, दाम पूछा, बोले एक-दो किलो दे दो; उसने रखना चालू किया — मत डालो, यह कच्चा है, यह पक्का है, यह सड़ा है, यह बढ़िया नहीं है — अब हो गया भेद। पहले सब फल था, अब भेद हो गया। भेद तब होता है जब आपको चाहिए। और चाहिए में भी सबसे ज्यादा बंधन तब है जब अपने तरीके से चाहिए — तब राग-द्वेष हो जाता है। जब खुद की बारी आती है तब आदमी भेद पैदा करता है; दूसरे को देना है तो "ठीक है भाई"। अपने तरीके से चाहिए में भेद है, तो अपने तरीके से चाहिए का त्याग करो। जब तक आप अपने तरीके से रसपान कर रहे हो तब तक भेद रहेगा — भेद को ही कहते हैं द्वैत; और आप अपने तरीके से पाने से मुक्त हो गए तो हो गया अभेद, अद्वैत। बस यही है द्वैत-अद्वैत की परिभाषा।

प्रश्न: गुरु जी, अपने तरीके से चाहिए का त्याग करने से कर्ता भाव भी नष्ट हो जाएगा क्या? (P23-0073)

हां, कर्ता भाव तो अपने तरीके से चाहिए तब बनता है — यही तो बात है। अपने तरीके से चाहिए का त्याग कर दो, बात ही खत्म; जरूरत में जीना चालू करो। बात तुरंत खत्म नहीं हो जाएगी — मुक्ति तो तुरंत मिल जाएगी, लेकिन सब राग-द्वेष से मुक्त होने में आपको परेशानी का सामना करना पड़ेगा, क्योंकि पिछला बनाया हुआ बहुत है ना, उसको भी तो भोगना है।

प्रश्न: गुरु जी, जरूरत में जीने का मतलब समझ में नहीं आ रहा। हर आदमी ने तो अपनी-अपनी जरूरत बनाई हुई है — तो कैसे तय करें कि इतनी जरूरत है?

(P23-0074)

अपनी-अपनी जरूरत आप कैसे बना लोगे? भोजन, कपड़ा और मकान। एक बंदा सोचता है कि मुझे लगजरी मकान चाहिए — यह जरूरत नहीं है, यह बेवकूफी है। अपनी बेवकूफी को जरूरत का नाम मत दो। मकान रहने के लिए बनाए — ना अच्छा ना बुरा, यह आप तय कर दिए। हमें सुरक्षित रहने के लिए मकान चाहिए — बस जितने में मैं जी सकूँ, यह जरूरत है। 20-25 साल पहले AC नहीं था तो क्या लोग नहीं जीते थे? AC से रोग ज्यादा बढ़ जाता है शरीर में — स्वास्थ्य के लिए प्राकृतिक रहना ठीक है। अभी भी पंखे से काम चल जाएगा। आपने अपने आप को मशीनों के द्वारा कमजोर बना दिया — मशीनों का सहयोग लेना था स्थिति-परिस्थिति में, आप उसके आदी हो गए, गलती आपने कर दी। जरा सा सिर दर्द हुआ, तुरंत टेबलेट — अरे जरा रुको, शरीर में भी ऐसा सिस्टम है जो सही कर देता है, जरा इंतजार तो करो। सुविधा का उपयोग करो, लेकिन पतन तो मत करो। घर हमें जितने में हम रह सकें उतना चाहिए।

प्रश्न: गुरु जी, जरूरत से ज्यादा बनाना-रखना तो प्रगति है ना? इसे प्रगति क्यों ना कहें? (P23-0075)

आप जरा ध्यान से समझो मेरी बात। आपके पास कितने कपड़े हैं? 15-20 कपड़े रखना प्रगति है? यह विनाश है। पहनते कितने हो? दो सेट काफी हैं — एक पहना, एक साफ करके रख दिया। साधक की थैली में दो सेट — एक तन पे और एक थैली में — उसे कहते हैं साधक। इतने बड़े-बड़े सूटकेस लेकर घूम रहे हो — अंदर भी खूब भर लिए हो और बाहर भी, घसीटते हुए ला रहे हो। महिलाओं के पास 100 साड़ियां हैं तो भी कम हैं, और पहनती एक-दो हैं; जितने गहने बनाने में आप परेशान हुए, जितनी बेईमानी की, वे गहने एकाध-दो बार शादी-विवाह में पहने जाते हैं, बाकी अलमारी में सड़ते हैं। अपने शौक के लिए सामने वाले गार्जियन को तुमने भ्रष्ट कर दिया — इसको उन्नति नहीं, पतन कहते हैं। घर ऐसा बना लिया कि रहने वाले दो और कमरे साफ करने के लिए नौकर रखने पड़ते हैं — बस मान के चक्कर में। पहले एक मां के पास कितने बच्चे साथ सोते थे — शरीर से भी नजदीक, मानसिक भी नजदीक; आज सबको अलग-अलग रूम चाहिए, क्योंकि सब अपने परिवार में ही राग-द्वेष में फंस गए। प्रेम है तो कम जगह में ज्यादा जगह हो जाती है, और द्वेष है तो ज्यादा जगह में भी कम जगह हो जाती है। श्रृंगार क्या है? आप चरित्रवान हो, ईमानदार हो, सत्कर्मी हो — पुरुष हो चाहे स्त्री — वही आपका श्रृंगार है। अंदर से अपने आप को भ्रष्ट कर दिया और ऊपर से श्रृंगार कर रहे हो — इसी श्रृंगार की वजह से लोग बेईमान हो गए, पतन हो गया। इसका डायरेक्ट कनेक्शन मुक्ति से है: बाहरी आवरण जरूरत में कर दो, आप मुक्ति से मोक्ष तक पहुंच जाओगे। आवरण के चक्कर में ही तो आपने बेईमानी की है। जरूरत में जीना चालू कर दो, ईमानदारी-सत्कर्म के साथ — मोक्ष के लिए, मुक्ति के लिए कोई प्रयास नहीं करना पड़ेगा, अपने आप होगा।

प्रश्न: गुरु जी, मतलब जो जरूरत से ज्यादा है वह दूसरों को दे देना चाहिए — यही कहने का मतलब है? (P23-0076)

60% से ज्यादा जरूरतमंद को दे दो। आप देख लो — कपड़े से लेकर जितना सामान आपके घर में है, 60% से ज्यादा बेमतलब का, बेकार पड़ा है, कभी यूज भी नहीं होता, और उसकी रखवाली करनी पड़ती है। किसके लिए? मान के लिए। उस 60% के लिए आपने अपने आप को भ्रष्ट कर दिया — जीने के लिए बेईमानी नहीं करनी पड़ी, अपने मान को खड़ा करने के लिए बेईमानी करनी पड़ी। लाखों रुपए पगार पाने वाले कहते हैं कि ऊपर से नहीं लेंगे तो चलेगा कैसे, बच्चों को अच्छी शिक्षा कैसे देंगे — बेईमानी के पैसे से अच्छी शिक्षा कभी नहीं हो सकती। मतलब जरूरत है वो लो, बाकी सब बांट दो — गलत जगह नहीं, जरूरतमंद को बांटो। यही तो उससे मिलने का रास्ता है कि अपनी जरूरत में जियो, और धन को, तन को, ज्ञान को सत्कर्म में लगाओ।

प्रश्न: गुरु जी, आप जो रास्ता दिखा रहे हैं वह तो पहले से हमारे ग्रंथों में लिखा है — अहिंसा, सत्य, अस्तेय, अपरिग्रह; अपरिग्रह का अर्थ है आवश्यकता से अधिक वस्तु का संग्रह ना करें। पहले इतने ईमानदार लोग थे — फिर हमारे देश में लोग इतने भ्रष्ट कैसे हो गए? शिक्षा में हमारी कमी रही, या हमने आवश्यकता से अधिक चाहा?

(P23-0077)

बस योग्यता से ज्यादा पाने में — साफ-साफ। और वो किसके चक्कर में? मान के चक्कर में, दिखावे के चक्कर में — उपयोग के चक्कर में नहीं। बस इतनी सी बात — इसीलिए भ्रष्टाचार। और फ्री में पाने की इच्छा — ध्यान से समझना — जब तक समाज में फ्री में पाने की इच्छा रहेगी, तब तक भ्रष्टाचार चलता रहेगा। फ्री में पाने की इच्छा और मान का चक्कर जब तक जीवन में रहेगा, तब तक आप एक परेशान इंसान रहेंगे। अगर आप यह छोड़ दीजिए — मान की इच्छा, योग्यता से ज्यादा पाने की इच्छा — तो आप शांति में जीने लगेंगे, और शांति में जीते-जीते परम आनंद घटित हो जाएगा। इतना साफ-सुथरा रास्ता है, लेकिन लोग बेईमानी-दुष्कर्म नहीं छोड़ रहे हैं और जा-जाकर खूब साधनाएं कर रहे हैं। एक शराब पीने वाला सौ रुपया कमाता था, पी के घर जाता था — उसे 2000 दे दो तो घर तक नहीं पहुंचेगा, गटर में गिरने लगेगा। पहले के गुरु नाम देने से पहले परीक्षा लेते थे कि सच में तुम्हें कुछ नहीं चाहिए; यह परीक्षा पास करता था तब जाकर देते थे। आज माइक से नाम बोल दे रहे हैं, लाखों शिष्य बना दे रहे हैं — गुरु को भी नहीं पता कि मेरे शिष्य कितने हैं। जिस गुरु का आप माला जप रहे हो, उसके दरवाजे पर चले जाओ, वह गेट के अंदर नहीं लेगा; जो जीते-जी आपको नहीं अपना रहा, वह मरने के बाद आपको क्या अपनाएगा?

प्रश्न: गुरु जी, मैंने ऐसा सुना था कि जहां अच्छे गुरु पैदा होते हैं वहां पर गलत लोग पैदा नहीं हो सकते — क्या यह बात सही है? (P23-0078)

एक बात बताओ — लोग कहते हैं एक ही ब्रह्म से सब है, तो शैतान, राक्षस, भूत-प्रेत जितने भी हैं, सब उसी से हैं ना? एक शुद्ध से अशुद्ध कैसे पैदा हुआ? जरा सोचने वाली बात है। जहां गुरु रहते हैं, वहां ज्यादा लोग इसलिए आते हैं कि मुक्ति-मोक्ष के लिए आते हैं, तो उनके नजदीक आते हैं — क्योंकि बिगड़ा हुआ आदमी सुधरने आएगा; सुधरे हुए आदमी को तो जरूरत ही नहीं है।

प्रश्न: गुरु जी, एक चीज और समझ में नहीं आ रही — कहते हैं परमात्मा ने, खुदा ने आपको बिल्कुल फ्री हैंड छोड़ दिया, जो करना चाहो करो, सही करो या गलत; लेकिन दूसरे हाथ में पकड़ भी रखा है — ऐसा कानून बनाया है जो सीबीआई से भी ज्यादा पावरफुल है, थोड़ी सी गलती की तो सजा मिलेगी। यह कैसे? (P23-0079)

देखिए, इस ब्रह्मांड में तीन गुण हैं — सात्विक, राजसी, तामसी (सतो गुण, रजोगुण, तमोगुण)। मानव में ऐसी प्रवृत्ति है कि आप गुरु (पैगंबर) भी बन सकते हो, देवता (पीर) भी बन सकते हो, राक्षस (शैतान) भी बन सकते हो। इस शरीर में कर्ता का अधिकार दिया गया है; बाकी जितने शरीर हैं उनमें कर्ता का अधिकार नहीं दिया गया — जानवर को कभी शैतान या देवता नहीं बोला जाता, उसके अंदर यह क्वालिटी नहीं है; उनमें भोग और भोजन फ्री में है। मानव शरीर में यह क्वालिटी है कि तीन में से क्या अपनाना है, आप स्वतंत्र हो। सात्विक प्रवृत्ति अपनाओगे — अपना दिया, अपना लिया — तो सीधा उससे कांटेक्ट हो जाएगा; राजसी-तामसी में जाओगे, राक्षस में या देवता में, तो इस जगत में आपका मान-सम्मान बढ़ेगा। देवता भी मनुष्य होते हैं — जैसे कोई मनुष्य अपराध करके कैदी हो गया, जेल से छूटा तो फिर मनुष्य कहलाता है। कोई भी जीवात्मा मनुष्य शरीर में आई, तो वह अपने आप को तीन में से कुछ भी बना सकती है। कर्म आप कर रहे हो — दूसरों को सता रहे हो, झूठ बोल रहे हो, बेईमानी-दुष्कर्म कर रहे हो, तो राक्षस हो, शैतान हो; लोगों की सेवा कर रहे हो, धर्मशाला बनवा रहे हो, समाज के लिए व्यवस्था कर रहे हो, तो देवता-प्रवृत्ति, पीर हो; और परमात्मा के यहां जाने का, निकलने का मार्ग बता रहे हो तो पैगंबर, गुरु हो गए। अगर आप उस कर्ता के अधिकार का दुरुपयोग करोगे, तो परिणाम आप भोगोगे।

प्रश्न: गुरु जी, मान लीजिए एक बंदा शैतान है और वह गुरु के पास आ गया — तो फिर उस गुरु का क्या रोल है? (P23-0080)

वो गुरु फिर उसे शैतानी से छुड़ाने के लिए कर्म करता है — बोलता है, मत कर, जितना करना था कर दिया; फिर कहता है जरूरतमंद की सेवा करो, ईमानदारी से, सत्कर्म से। फिर वो उसे पैगंबर की तरफ, गुरु की तरफ लेकर जाता है। गुरु कभी शिष्य नहीं बनाता, आप यह ना समझना — सही गुरु गुरु बना देगा। गुरु सम बनाता है, गुरु अपने जैसा बनाता है; वो आपको नीचे रखेगा ही नहीं, कभी नहीं। इसलिए तो वह सीधा कहता है कि ईमानदारी-सत्कर्म अपना ले, तू गुरु पद पर जाएगा — उस पद पर आत्मज्ञानी होगा तभी तो आगे बढ़ पाएगा, तभी कल्याण होगा तेरा। इसलिए तो गुरु को श्रेष्ठ बोला गया — दुनिया में सब आपको नीचे रखना चाहते हैं, गुरु ही अपने जैसा बनाता है; इसीलिए गुरु को सब प्रणाम करते हैं।

प्रश्न: गुरु जी, आदमी तो आदत से भी चलता है — हैबिट हो गई, वह करे जा रहा है। क्या गुरु उसकी आदत को तोड़ सकता है? और जो काम गुरु नौ महीने में कर सकता है, वह नौ दिन में भी तो कर सकता है? (P23-0081)

धीरे-धीरे उसके पास रहेगा तो तोड़ देगा — उसके सानिध्य में रहना पड़ेगा, ज्यादा दूर से काम नहीं चलेगा। हल्की बीमारी है तो डॉक्टर दवा-टेबलेट दे देगा; बहुत ज्यादा है तो एडमिट करेगा, चीर-फाड़ करेगा, फिर तो तुम्हें वहां रुकना पड़ेगा। लीवर का ऑपरेशन की बारी आई तो सारी नौकरी वगैरह छोड़ते हो कि नहीं? आप लोग तो ज्यादा बीमार हो — कम से कम नौ महीने तो मां के गर्भ में थे, उतना तो रहो, एडमिट तो हो। इसलिए तो सारी व्यवस्था गुरु देता है — खाना-पीना-रहना, कुछ सोचना नहीं है, क्योंकि उसे पता है अब तू एडमिट हो जा। और नौ दिन में? आप हॉस्पिटल में जाकर बोल दो कि तुरंत कर दे — होता है क्या? विज्ञान इतना आगे चला गया, क्या ऐसी कोई व्यवस्था है कि बच्चे को नौ दिन में पैदा कर दे? नहीं हो सकता।

प्रश्न: गुरु जी, पहले तो पीर ही बनेगा ना, फिर बंदा पैगंबर बनेगा — धीरे-धीरे? (P23-0082)

नहीं, आपको सीधा पीर बनने की जरूरत नहीं है — सीधा पैगंबर वाली, गुरु वाली लाइन पर आओ, ईमानदारी-सत्कर्म करो। ऐसा नहीं कि आपको शैतान से पीर, पीर से पैगंबर बनना है — आप सीधा अपना सकते हो। पीर बनना है, देवता बनना है, तो सेवा — लेकिन वो जरूरतमंद की नहीं, मान-सम्मान के लिए: भंडारा करा दो, स्कूल बनवा दो, कॉलेज बनवा दो। और पैगंबर बनने के लिए ईमानदारी-सत्कर्म, और सत्कर्म में भी आपको जरूरतमंद को खोजना पड़ेगा — कि वाकई मैं जरूरतमंद है, सच में मैं भोजन दे रहा हूं तो वह खा रहा है कि नहीं, फेंक तो नहीं दिया गया — पूरी छानबीन करनी पड़ेगी। इसलिए बिस्किट का पैकेट भी दो तो जरा खोल के दो, ताकि कोई ना कोई खाए, नहीं तो वह बेच देगा।

प्रश्न: गुरु जी, आप तो निकल चुके हैं ना — लेकिन निकल गए तो वापस भी तो आ सकते हो? क्या उपलब्धि के बाद भी आदमी मुड़ सकता है? (P23-0083)

आ सकते हो — गलती करोगे तो आओगे। एक कैदी, एक अपराधी सजा काटा और बाहर आ गया, फिर अपराध करे तो फिर अंदर जाए — वो तो आपके हाथ में है। पहली बार जब खुदा के पास से, परमात्मा के पास से चले होंगे, तब तो शुद्ध रहे होंगे, पवित्र रहे होंगे ना? इसलिए जीवन को सोच-समझ के जीना पड़ता है। उपलब्धि के बाद भी बंदा मुड़ सकता है — वो गलत कुछ करे तो मुड़ सकता है; गलत ना करना उसके ऊपर है। इसलिए तो इतना जांचना पड़ता है। गुरु से गलती हो नहीं सकती, लेकिन कर तो सकता है — अपनी समझ से। जज सबको सजा दे रहा है, वो चाहे तो खुद भी गलती कर सकता है; राजा देश चला रहा है, वो चाहे तो कैदखाने में भी जा सकता है। इसलिए पूरा जीवन सोच-समझ के, होश में जीना पड़ता है।

प्रश्न: गुरु जी, हम यहां कुछ सेवा कर ही नहीं पाते — ना बर्तन साफ किए, ना कुछ काम कर पाए। (P23-0084)

अपनी थाली धो लो, इतना बहुत है; और आत्मिक कल्याण करो, यही सेवा है। मानव तन की प्रथम सेवा यही है कि अपना आत्मिक कल्याण करे — इसी को सेवा कहते हैं। ये नहीं किया तो किसी सेवा का कोई मतलब नहीं है।

प्रश्न: गुरु जी, कहते हैं कि जगह में खासियत होती है — क्या किसी स्थान में कोई शक्तियां होती हैं? (P23-0085)

आप खुद बताओ — इटली से लेकर हिंदुस्तान तक आप घूमे, ऐसी जगह आपको कहीं मिली? नहीं — तब यह कोई साधारण स्थान नहीं है, और फिर इसके बाद अपनों की कुटिया बनी तो बात ही अलग हो गई। यहां एक सुरक्षा चक्र है — यह मैंने पहले दिन से अनुभव किया है; आप खंभे के पार जाकर और यहां रहकर फील कर सकते हो। आप देखिए ना — आपने ध्यान वगैरह के लिए कितनी मेहनत की, लेकिन यहां अपने आप विचार कम हो गए, उथल-पुथल कम हो गई, अशांति कम हो गई; आपने कोई मेहनत भी नहीं की, हमने भी कुछ आपसे नहीं करवाया — यहां रहना ही साधना है। गुरु हमेशा अंदर से ही करता है, बाहर से करने की क्या जरूरत है? क्या जरूरी है जताना कि मैंने आपके लिए कुछ किया? यह करने में तो जिंदगी लगा दी कि कैसे लोगों का कल्याण हो।

प्रश्न: गुरु जी, एकांत में शांति से अपनी चटाई लेकर बैठते हैं; अभी तक तो हम ध्यान करते थे — अब ध्यान नहीं करना है, तो अब क्या करें? केवल चुपचाप बैठें? अपने आप में ही आनंद है, तो अपने आप को कैसे सोचें? (P23-0086)

कुछ नहीं — यही तो गलती करते हो तुम लोग। आप अपने आप में रहो ना, आप में ही तो आनंद है — उसे निकलने तो दो। आप निकलने ही नहीं देते — जैसे ही अपने आप में हो रहे हो, कुछ ना कुछ पकड़ना चाहते हो। अपने आप में हो जाओ, आनंद को निकलने तो दो। चुप ही तो होना है, मौन होना है, अपने आप में होना है — पांचों इंद्रियों से मौन हो जाना है, और मन को बहने दो, जहां जा रहा है जाने दो। आप बैठे हो, बाल उड़ रहा है, तो क्या कहोगे कि मैं बाल पकड़ के बैठूंगा, एक भी बाल उड़ना नहीं चाहिए? आपका एक रोएं पे कंट्रोल नहीं है। मन शरीर के लिए काम करता है — भूख लगी, इंगित करेगा; बाथरूम लगी, इंगित करेगा। मन को नहीं रोकना है, मन जरूरत में जाता है। ध्यान नहीं करना, कुछ नहीं करना — ना करने में आ जाना है, बस बात खत्म; क्योंकि ना करने में आप होते हो, और आप हो तो वह है। अब ध्यान का नाम ही मत दो — चुपचाप बैठ जाओ, बस।

प्रश्न: गुरु जी, लोग कभी-कभी चुपचाप बैठ के मंत्र जाप वगैरह करते हैं — इसका क्या प्रभाव है? (P23-0087)

कुछ नहीं, मत करो — अपने आप में हो जाओ। उससे ऊर्जा मिलेगी; फिर उस ऊर्जा से आप ईमानदारी-सत्कर्म कर रहे हो तो ठीक है, और नहीं तो फिर बेईमानी-दुष्कर्म करोगे तो पतन हो जाएगा।

प्रश्न: गुरु जी, यहां रहकर कभी-कभी आंतरिक परेशानी ज्यादा हो जाती है — कल पूरा दिन परेशानी रही। और आंतरिक बदलाव क्या-क्या होते हैं? (P23-0088)

आपके कर्म के सब आ रहे हैं — आएंगे ना। आपके कर्म सताएंगे, जितना आपने किया है सब सामने आएगा; तो अच्छा हुआ, आप बड़े जल्दी इसी समय में समझ लिए। आंतरिक बदलाव में राग-द्वेष कम होने लगता है, कामनाओं में कम भागते हो।

प्रश्न: गुरु जी, मोह क्या है? और लोग जो पशु-पक्षी पाल लेते हैं, उसके सहारे जीने लगते हैं — क्या पालना चाहिए? (P23-0089)

मोह मतलब — जिससे हमें अपने तरीके से कुछ मिलता है; जब मिलता है तो आसक्ति हो जाती है कि वह कहीं चला ना जाए, चला जाएगा तो मिलेगा नहीं — उसके प्रति आसक्ति बंधन हो जाता है। सबसे ज्यादा मोह होता है जहां से पांचों इंद्रियों को सुख मिलता है — नर-मादा के मिलन में, या पुत्र-मोह। पशु में भी हो सकता है — दूध दे रही है, आप पर निर्भर है, बहुत सुंदर-प्यारा लग रहा है, तुम्हारे तरीके से चल रहा है, बुलाया तो आ गया, बात मानने लगा — तो मोह हो जाता है। ज्यादातर लोग इस मार्ग में आगे नहीं बढ़ते तो पशु-पक्षी पाल लेते हैं, उसके सहारे जीने लगते हैं। पक्षी तो नहीं पालना चाहिए — उसे स्वतंत्र करो, उसको जीने दो; पशु पाल सकते हो। लेकिन संन्यासी को, खोजी व्यक्ति को कभी कुछ नहीं पालना चाहिए — पाला तो फंस जाएगा, कहीं जा ही नहीं पाएगा, उसे लेके भी नहीं जा सकता। संन्यासी को बांधने वाला कोई काम करना ही नहीं चाहिए — ज्ञान तक; ज्ञान हो जाए तो बात खत्म।

प्रश्न: गुरु जी, क्या आत्मा होती है? गौतम बुद्ध कहते हैं आत्मा नहीं होती, आदि गुरु शंकराचार्य कहते हैं कि आत्मा और चेतना एक ही है, जैन भी कहते हैं कि आत्मा और चेतना एक ही है। (P23-0090)

मैं कह रहा हूं, तुम किसी के चक्कर में मत पड़ो। तुम देखो कि तुम हो या नहीं — बस। और तुम क्या हो, वो देख लो।

प्रश्न: गुरु जी, क्या आत्म तत्व ही गुरु तत्व है? (P23-0091)

आत्म में स्थिर हो गया तो गुरु पद पर हो गया — वह निर्विकार हो गया। राग-द्वेष, मोह, शक्ति, इच्छा-अपेक्षा, मेरा, कर्ता — इनसे मुक्त हो गया तो गुरु पद पर हो गया।

प्रश्न: गुरु जी, मुझे यह जानना है कि जीव, माया और ब्रह्म — तीनों में अंतर क्या है, तीनों का आपस में संबंध क्या है, और हम ब्रह्म तक कैसे पहुंच सकते हैं?

(P23-0092)

मैं जिस स्थिति में अभी हूँ, मेरे सामने माया है; ब्रह्म का पता मेरे जीवन में नहीं है — है तो सिर्फ एक जानकारी, जो सही भी हो सकती है, गलत भी। अब देखना है कि मैं किस स्थिति में हूँ — क्या मैं इस स्थिति में रहना चाहता हूँ? क्या मैं महसूस कर पा रहा हूँ कि मेरी स्थिति अशांत है? क्या मैं इससे निकलना चाहता हूँ? यह संसार है, इसको एक तरह माया बोला गया है। इस माया से हमें कोई तकलीफ नहीं है; यहां हर व्यक्ति की अलग-अलग दुनिया है, और सबकी दुनिया में अलग-अलग लोग हैं। हम प्रभु की माया से परेशान नहीं हैं, अपनी माया से परेशान हैं — और अपनी माया हम स्वयं बनाते हैं। यह शरीर सिर्फ एक मशीन है, इसका उपयोग आप ही करते हो; बुद्धि निर्णय लेने में, आदान-प्रदान में सहायक होती है। हम उस माया से परेशान हैं जिसका निर्माण हमने बेईमानी के द्वारा, दुष्कर्म के द्वारा किया है, और उसी माया में ग्रसित हो गए हैं। अब निकलना चाह रहे हैं तो लोग कह रहे हैं — हिसाब करो तब निकलो, मेरी भरपाई कर दो तब जाओ — क्योंकि हमने लेनदेन कर लिया है। निकलना है तो लेनदेन पूरा करो — ईमानदारी और सत्कर्म के साथ जीवन जीते हुए अपना कर्तव्य करो। और जीव — अगर आप इच्छा और अपेक्षा में हो तो जीव की स्थिति है; तो जीव का नाश करना पड़ेगा, जीव के पीछे आत्मा है। आत्मा इस शरीर में आई, उसे कर्ता का अधिकार है, और इच्छा-अपेक्षा में वह जीवात्मा हो गई — जैसे पानी फ्रिज में गया तो ठंड की वजह से बर्फ बन गया; नॉर्मल जगह लाओ, फिर वैसा का वैसा हो जाएगा। इच्छा-अपेक्षा से अपने आप को छुड़ा दो तो जीव का नाश हो जाएगा, आप आत्मा में स्थिर हो जाओगे, और आत्मा फिर परमात्मा की यात्रा करेगी। तो ब्रह्म से आत्मा है, ब्रह्म से माया है; आत्मा जीवात्मा हो गई है। आपने अपने आप को बदल दिया है, अपना अस्तित्व बना लिया है — आपके बनाए हुए अस्तित्व का आपको नाश करना पड़ेगा।

प्रश्न: गुरु जी, समझ में तो आता है — शास्त्र, महापुरुषों की वाणी पढ़ते हैं, सब समझ में आ रहा है — लेकिन अपना बनाया हुआ अस्तित्व मिटा नहीं पा रहे। ऐसा क्यों? और ब्रह्म को मानें या जानें? (P23-0093)

रिस्क नहीं ले पा रहे हो। पता है क्यों? पक्का नहीं है कि ब्रह्म है। जिस दिन पक्का हो जाएगा, उस दिन क्या आप उसके बिना रह पाओगे? सोच रहे हो कि अगर यह मैं सब छोड़ दूँ और वो ना मिला तो — अभी तो कुछ है। यह रिस्क नहीं ले पा रहे हो, छलांग लगानी है। उससे अलगाव इसलिए हुआ कि आपको मालिकपन बनने का भाव आया; अब मालिकपन बनने का भाव छूटे तब उससे मिलना होगा। रिस्क इसलिए नहीं ले पा रहे कि यह आपकी माया प्रत्यक्ष है, वह प्रत्यक्ष नहीं है; यह भी पता है कि आखिरी में यहां भी कुछ नहीं मिलेगा, लेकिन अभी तो कुछ है। अगर किसी को अपनी मां का पता चल जाए तो वह और कहीं रहेगा? अपनी मां की गोद में कूद जाएगा। यह तभी पक्का होगा जब अस्तित्व को मिटाओगे। और ना मानना है ना जानना है — मानोगे तो भी भटक गए, जानोगे तो भी भटक गए। किसको जानोगे? जब तक जानोगे तब तक आप दो हो — जानने वाला और जिसे जाना जा रहा है। अपने बनाए हुए अस्तित्व को मिटाना है, मालिकपन के भाव को छोड़ना है — सीधी सी बात है। और "मैं" कैसे मिटेगा? मैं कहां से खड़ा हुआ? "तुम" से — सामने वाले से; जब तक सामने वाला है तब तक मैं कैसे मिटेगा? और तुम के पास किसके लिए गए? कुछ चाहिए में — कुछ चाहिए की वजह से तुमको पकड़ा, तुम की वजह से मैं तैयार हुआ। तो जब कुछ चाहिए की इच्छा का त्याग होगा तो तुम गिरेगा, और तुम गिरेगा तो मैं गिरेगा। कुछ नहीं चाहिए में आ जाओ, बात खत्म हो जाएगी। ब्रह्म से आत्मा भी है, ब्रह्म से माया है — आत्मा अगर माया में रहेगी तो ब्रह्म में नहीं, ब्रह्म में रहेगी तो माया में नहीं, यह ध्यान रखना।

प्रश्न: गुरु जी, मुझे इसके साथ यह भी पूछना है कि हम विश्वास करें कि श्रद्धा करें? श्रद्धा और विश्वास में क्या फर्क है? (P23-0094)

विश्वास प्रकृति की प्रथम व्यवस्था है — विश्वास आपको करना ही पड़ेगा। प्यास लगी तो किसी से गिलास पानी मांगो, या नल पर जाकर लो — नल पर तो विश्वास करना पड़ेगा। कभी नल खोलते हैं, पानी नहीं आता — तो क्या नल ने धोखा दिया? नहीं, उसमें पानी नहीं था। विश्वास सिस्टम की व्यवस्था है; अंधविश्वास आपकी कमजोरी है। दो लोग दुकान पर गए — एक अमीर, एक निर्धन; दुकानदार ने कहा कल लाऊंगा, दूसरे दिन कहता है समय नहीं मिला। अमीर कहेगा जाओ, मैं और किसी दुकान से ले लेता हूँ; गरीब कहेगा भाई, कल लेते आना — यह गरीब का विश्वास नहीं, अंधविश्वास है, उसकी गरीबी की वजह से। तो अपनी कमजोरी को विश्वास का नाम मत दो; अंधविश्वास आप मजबूरी में करते हो, जब आपके पास ऑप्शन नहीं होता। और यह मत समझना कि मैं विश्वास करता हूँ तो बड़ा एहसान करता हूँ — विश्वास तो एक-दूसरे पर करना ही पड़ेगा। फिर श्रद्धा क्या है? जिसके लिए हम गए हैं, वह जब प्रत्यक्ष हो जाता है, तो उसके प्रति हमारी श्रद्धा हो जाती है — समर्पण और श्रद्धा। वह कार्य चाहे अच्छा हो चाहे बुरा — बुरे कार्य के लिए भी गए हो और उस व्यक्ति से कार्य हो गया, तो उसके प्रति श्रद्धा हो जाएगी; श्रद्धा अच्छे-बुरे किसी के प्रति भी हो सकती है, आपका कार्य कैसा है उस पर है। श्रद्धा मतलब उससे आपका स्नेह-लगाव हो जाएगा, एक भरोसा हो जाएगा कि यह भरोसे लायक इंसान है। विश्वास और भरोसा घुमा-फिरा के एक ही है।

प्रश्न: गुरु जी, माया हटी मतलब अपना जो भी बनाया हुआ अस्तित्व है वह पूरा हट जाए, तो सीधा ब्रह्म से कनेक्ट हो गए? (P23-0095)

देखिए, आत्मा या तो जीवात्मा बनकर माया में रहेगी, या तो ब्रह्म में रहेगी। माया में रहेगी तो ब्रह्म में नहीं, ब्रह्म में रहेगी तो माया में नहीं। और तुम इस समय उसे दो जगह रखना चाहते हो — नहीं हो सकता, यही गड़बड़ी है।

प्रश्न: गुरुदेव, यह आत्म तत्व — क्या इसका संख्यात्मक दृष्टिकोण भी है? आत्मा एक है या अनेक? ब्रह्म एक है, परमात्मा एक है, तो आत्मा? (P23-0096)

आत्मा अनेक है — एक जैसी है। आत्मा में स्थिर हो जाओगे तो द्वैत का भाव, राग-द्वेष खत्म हो जाएगा, सब एक जैसे दिखेंगे। मैं "एक" नहीं बोल रहा, मैं अनेक बोल रहा हूँ — "एक जैसा" बोल रहा हूँ; हमारे शब्दों पर जरा ध्यान दो।

प्रश्न: गुरु जी, आपने अभी शब्द बोला था कि मालिक बनने के चक्कर में उस मालिक से दूर हुए। यह मालिकपन का भाव कहीं पहले जन्म से तो आया होगा ना? यह इतना गहरा हो गया है कि छूट नहीं रहा। (P23-0097)

बस मालिक बनने का चक्कर — मालिक बनके उससे भी दूर हुए, बाप से दूर हुए, भाई से दूर हुए; मालिकपन का भाव बहुत खतरनाक है। जहां से भी हुआ, इस समय देखो — हुआ है ना? निकलना है। चाहे जितना भी गहरा हो, छोड़ना तो चालू करो। कैसे भी अपने आप को निकालो, समझदारी से। तो मालिकपन के भाव को छोड़ो, सेवकपन का भाव अपनाओ — सीधी सी बात है। और वो तब आएगा जब ईमानदारी-सत्कर्म होगा। सेवक ही उससे मिलता है, और सेवक बनने के लिए ईमानदारी और सत्कर्म — बस इतना ही है।

प्रश्न: गुरु जी, इतनी आसान बात है, फिर हम लोगों का अड़ता कहां पर है? जैसे आपने मुझे डांट दिया, तो मुझे देखना चाहिए कि डांटा किस लिए — कहीं गलती है — और उसे लाइटली लेना चाहिए; पर हम लोग किसी बात को लाइटली लेते नहीं।

(P23-0098)

इसलिए कि आप पक्का नहीं कर पा रहे हो कि चाहिए क्या। और आप उल्टा करते हो — जहां आप रसपान करते हो वहां लात-जूते खाते हो, चलेगा; और जहां रसपान से छुटकारा दिलाया जाएगा, वहां एक शब्द बर्दाश्त नहीं कर पाते। जहां सच में आपके कल्याण की बात होगी, वहां आप नहीं सह पाते; और जहां आपके रसपान की बात होगी, वहां के लात-जूते भी ठीक हैं। उसी घर में कभी हाथ में हाथ डाल के प्रेम की बातें करते हैं, और उसी घर में, उन्हीं हाथों से तोड़ाई भी हो रही है — कभी उसी व्यक्ति के गले लग रहे हैं, उसी से मारपीट हो रही है। यह कैसी जिंदगी है? पशुओं की तरह जी रहे हैं। और फिर कहते हो "प्रेम में झगड़े होते हैं, प्रेम बढ़ता है" — अपनी लड़ाई-कुटाई को प्रेम का नाम दे दिया, कितना गिर गए हम! जिसके प्रति आपका प्रेम होगा, क्या आप उस पर उंगली भी उठा सकते हो? यह प्रेम नहीं, इच्छा-अपेक्षा है — रसपान के चक्कर में लात-जूते खाके पड़े हैं। फिर भी एक-दूसरे से तुलना करके तसल्ली देते रहते हैं कि मैं उससे बेटर हूं, मैंने कम मार खाई — तुलना करके बहुत बुरी जगह हमने अपने आप को फंसा लिया।

प्रश्न: गुरु जी, सर्कस में शेर तक को सिखा देते हैं — बिना बोलने वाला जानवर सीख जाता है — हम लोग क्यों नहीं सीख रहे? इतनी बातें सब समझ में आ रही हैं, उम्र 50 पार कर गई, फिर भी उसी दुनिया में गोते लगा रहे हैं — इतना गहरा क्या है?

(P23-0099)

रसपान की इच्छा। शेर क्यों कूदता है, पता है? मांस के टुकड़े के लिए — शेर अपनी ताकत भूल गया, वही आपकी हालत है। आप कुत्ते को डांटते हो, दो थप्पड़ मारते हो, वो चला जाता है और फिर आ जाता है — आप भी वही रहना सीख गए हो। आप रसपान के लिए पड़े हो। अगर रसपान हटा दिया जाए, तो उस व्यक्ति को आप तुरंत छोड़ दोगे, उसी जगह पे। रसपान ही आपकी माया है। उम्मीद-अपेक्षा छोड़ दो — बस उम्मीद छोड़ दो, वहीं रहकर भी आप छूट गए।

प्रश्न: गुरु जी, यह उम्मीद रहती कहां पर है — मेरे मन में या मेरी बुद्धि में?

(P23-0100)

बुद्धि सिर्फ निमित्त बनती है, बुद्धि कुछ बताती-उताती नहीं। यह भाषा आपको पढ़ना आता है तो बुद्धि द्वारा पढ़ सकते हो, नहीं आता तो नहीं पढ़ पाओगे — बुद्धि द्वारा आपने क्या सीखा है, बात यह है। वही आदमी कभी आपको अच्छा लगता है, वही बुरा, फिर वही अच्छा — बुद्धि तो वही की वही है, क्यों बदल गया? जैसी आपको सामने से समझ मिलती है। मान लीजिए किसी ने भोजन लाकर दिया, बोला आपसे बहुत प्रेम करने वाले ने दिया है — आप रुचि से खाने लगे; कोई दौड़ा-दौड़ा आया, भोजन मत खाओ, यह शत्रु का है — अब वही भोजन घुटन देने लगा; फिर आपकी मां या कोई सबसे प्रिय आई, बोली क्या मजाक कर रहे हो — बस वही भोजन फिर सुकून देने लगा। बुद्धि वही, आंख वही, मुंह वही, भोजन भी वही — फिर स्थिति क्यों बदली? जैसी आपको समझ मिल रही है, वैसा आपका भाव बदल रहा है।

प्रश्न: गुरुदेव, शरीर, मन और बुद्धि की बात हुई — कुछ लोग इसके पार भाव की बात कहते हैं, कुछ उसे आत्मा का अभिन्न स्वभाव भी बोलते हैं। क्या भाव भी मन-बुद्धि के इसी कार्यक्रम से जुड़ी हुई चीज है? (P23-0101)

भाव तो जैसा आप कर्म करते हो वैसा बनता है — कर्म के पहले, कर्म के बाद एक भाव बनता है, उससे फल का निर्णय होता है। जैसी वस्तु आपके सामने आएगी — मान लीजिए आप बैठे हो, कुछ भी भाव चल रहा है, कुछ सड़ा हुआ आपकी नाक पर रख दिया जाए, तो तुरंत भाव बदल जाएगा। जैसा आप पांच इंद्रियों द्वारा — देख के, सुन के, सूँघ के, स्वाद से, स्पर्श से — ग्रहण करते हो, या जैसा अंदर है, वैसा ही भाव बनता है। "भाव विद्यते देवा" — भाव में ईश्वर का वास है। जैसा आप करते हो, वैसा बनने लगते हो, वैसा आपका भाव बनने लगता है। तो मूल आपका कर्म है — आपके द्वारा क्या किया जा रहा है, किस भाव से किया जा रहा है। भाव के बाद कर्म, कर्म के बाद भाव — सब एक-दूसरे के पूरक हैं, अंतर-संबंधित हैं। मेन आपकी समझ है, मेन आप हो — सीधी सी बात है। बुद्धि के चक्कर में, मन के चक्कर में मत पड़ो; जिसको जीवन में कुछ नहीं करना है, वह कहेगा क्या करें मन भटकता है — उसे रसपान करके पड़े रहना है।

प्रश्न: गुरु जी, क्या समभाव भी एक बेईमानी है? (P23-0102)

समभाव, सम दृष्टि एक स्थिति है — आप समभाव ला थोड़ी सकते हो। समभाव तब होगा जब आपको कुछ नहीं चाहिए, नहीं तो नहीं होगा; चाहिए में तो होगा ही नहीं।

प्रश्न: गुरु जी, एक भाषा में कहा जाए तो मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार, काम, क्रोध, लोभ — ये सब शरीर में हैं? कुछ लोग अंतःकरण चतुष्टय बताते हैं — मन, बुद्धि, चित्त और आखिर में अहंकार — कि अहंकार नष्ट किए बिना सर्वेश्वर तक नहीं पहुंचोगे। (P23-0103)

नहीं, शरीर में नहीं हैं। ये सब घटनाओं में आते और जाते हैं — देश, काल, स्थिति, परिस्थिति में आते हैं और जाते हैं, शरीर में रहते नहीं। अहंकार कैसे आता है, समझना — जब आप किसी को नीचा दिखाना चाहते हो, तब अहं भाव आता है; और नीचा दिखाने में जब उसे प्रतिक्रिया देते हो, तो वह अहंकार होता है। अहंकार आया और गया — तो उसे नष्ट कैसे करोगे? जो जाता है उसे कैसे नष्ट करोगे? समझकर उसे छोड़ सकते हो — आने मत दो। वैसे ही काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद — ये सब आते-जाते हैं; आप एकदम पवित्र, शुद्ध आत्मा हो। आप चाहो तो तुरंत यह सब आना-जाना बंद कर सकते हो — कुछ नहीं चाहिए मैं आ जाओ, उम्मीद छोड़ दो, बस खत्म। अपने तरीके से चाहिए का त्याग करो — आपने कुछ चाहा, उसने आपके तरीके से नहीं किया, तो आ गया गुस्सा; कर दिया तो आ गया राग — बस यही है। तो अपने तरीके से क्यों चाहो? उचित तरीका अपनाओ, जो आपके हित में हो, उसके हित में हो।

प्रश्न: गुरु जी, मालिकपन से सेवक बनना है — तो किनका सेवक बनना है? सेवकपन का भाव कैसे लाएं? (P23-0104)

व्यक्तिगत किसी का नहीं — बस सेवकपन के भाव में जीना है, वह भी ईमानदारी-सत्कर्म से, जरूरतमंद के लिए। अभी मेरा कहना है कि अपने आप को कैसे निकालो, उसके लिए काम करो। अहंकार कब आता है, पता है? जब आप अपने से ज्यादा योग्य वाले की सेवा करते हो, तब आपको अहंकार आता है — यह ध्यान रखना। जरूरतमंद की सेवा करोगे तो अहंकार आएगा ही नहीं। तो जरूरतमंद की सेवा करो, ईमानदारी के साथ — अपने स्व तक पहुंचने के लिए यही सबसे आसान, सरल रास्ता है। फिर उसके बाद परमात्मा की यात्रा होगी; अभी उसकी बात करने का कोई मतलब ही नहीं है, इसलिए मैं नहीं करता — वह सारे विषयों से परे है, शब्द-दृश्य-गंध-रस-स्पर्श से परे है, फिर क्या बताना? आप पहुंचो ना। मैं तो बस इतना कहता हूं कि आप अपने आप में कैसे हो जाएं। आपको लग रहा है कि मेरा जीवन ठीक है, तो लगे रहो; लग रहा है कि ठीक नहीं है, तो इसे छोड़ो, मूल में आओ — छोड़ने का तरीका मैं बता रहा हूं। कोई कहे मैं खुश हूं, तो मैं बोलूंगा जाओ खुश रहो; कोई परेशान है, तो उसे बताऊंगा इस परेशानी से कैसे निकलो। इसलिए निर्विकार कैसे हो जाओ, उसके लिए काम करो — उसके लिए मैंने सबसे सरल देखा ईमानदारी-सत्कर्म।

प्रश्न: गुरु जी, दिन भर जो कार्य हमारे द्वारा होते हैं, कुछ समय जानते हुए करते हैं, कुछ अनजाने में अचानक होते रहते हैं। तो कोई ऐसी युक्ति हो, कोई सूत्र, कि 24 घंटे हम सजग रहें, जानते हुए करें — आजकल जो सजगता, अवेयरनेस की बात बताई जाती है? (P23-0105)

क्या बिना जाने करते हो? खाना फटाफट खा लिया, पूरा चबाया भी नहीं — तो भी मुंह में ही डाल रहे हो ना, आंख में तो कभी नहीं डाला? पेशाब करने जाते हो तो बाथरूम ही करते हो — कभी ऐसा धोखा हुआ? अनजाने में कुछ नहीं होता, सब समझ-सूझबूझ के साथ होता है। अनजाने में हो जाए, तब तो तुम पागल हो, मंदबुद्धि हो या अबोध हो। जरूरत थी, खुजा लिया — उसे गिन के क्या करोगे? बस अपने आप को पढ़ाना बंद करो, नहीं तो और फंस जाओगे। और ध्यान रखना — ईमानदारी से ज्यादा समझ बेईमानी में लगती है; बेईमानी में बहुत सचेत रहना पड़ता है, होशपूर्वक बेईमानी होती है; भटकने में भी बहुत समझदारी चाहिए। इसलिए अपने आप को धोखा मत दो, सच्चाई का सामना करो और आगे बढ़ जाओ। क्या चाहिए, पक्का कर लो, उसके लिए काम करना पड़ेगा — बातों से बात नहीं बनेगी। यह सब ट्रेंड चल गया है मार्केट में — "ऐसी प्रैक्टिस करो कि जागरूकता नींद में प्रवेश कर जाए, शरीर सो रहा है मैं जाग रहा हूँ" — फालतू बातें हैं। नए-नए शब्दों में उलझ गए हो। जिससे कुछ हो सकता है — ईमानदारी-सत्कर्म — काश उसको पकड़ लेते, और बढ़िया से सोते, खाते, कपड़ा पहनते, घूमते, इज्जत की जिंदगी जीते, खुद अपनी इज्जत करते। बस कुछ पाना, कुछ पाना — कभी भौतिक के नाम से, कभी अध्यात्म के नाम से; अब अध्यात्म में भटक रहे हो। मेरा तो बस यही कहना है कि ईमानदारी-सत्कर्म अपनाकर जीवन जियो, बात खत्म।

प्रश्न: प्रभु जी, मानव शरीर तीन प्रकार का होता है — स्थूल, सूक्ष्म और कारण। इसको कैसे समझें? कृपा करके समझाइए। (P23-0106)

स्थूल तो दिख रहा है; कारण — जब तक हम कारण में जी रहे हैं; और सूक्ष्म में स्वप्न में जाते हैं। बस, उसको समझ के क्या करेंगे? आप यह देखो कि मेरे द्वारा क्या कार्य हो रहा है। जैसा आप करोगे वैसा बनते चले जाओगे — बात सीधी-सादी है। अशुद्ध काम करोगे तो अशुद्ध बनते जाओगे, शुद्ध काम करोगे तो शुद्ध बनते जाओगे। अशुद्ध रहोगे तो इस जगत में भटकते रहोगे; शुद्ध हो जाओगे, पूरी तरह पवित्र हो जाओगे, तो कभी ना कभी आपका उससे मिलना हो जाएगा। बस यही समझना है।

प्रश्न: गुरु जी, परिवार से निमंत्रण आता है और हम जानते हैं कि वे ईमानदारी से नहीं कमाते — तो उनके यहां भोजन ग्रहण करना चाहिए या नहीं? (P23-0107)

आप देख लो — ऐसे तो नहीं करना चाहिए। मैं एक घटना बताता हूं। मिर्जापुर में रुके थे, वहां वालों ने कहा उनकी बहन दूर रहती है, वहां चलें — हमने कहा ठीक है, सुबह निकलेंगे। रात को आराम करने गया, फिर तुरंत वापस आया, पूछा — पहले यह बताओ, वे करते क्या हैं? बोले पोल्ट्री फार्म है। मैं बोला, मैं उनके यहां पानी तक नहीं पिऊंगा, जाने की बात कर रहे हो! बोले हम व्यवस्था बाहर से कर देंगे — मैंने कहा उनके घर में पंखा चलेगा, उस पंखे की हवा भी मुझे घुटन देगी, क्योंकि कई मुर्गियां कटी होंगी तब वह पंखा आया होगा; कुर्सी-टेबल सब — ना बाबा, मुझसे नहीं होगा। फिर नहीं गया। फिर वे लोग आए तो हमने कहा, यह व्यापार छोड़ के कोई और व्यापार अपना लो। तो मैं ऐसे घर में नहीं जाता जहां पोल्ट्री फार्म हो, जहां जीव-हत्या का व्यापार हो — ऐसे यहां पानी पीना भी पसंद नहीं करता। वे क्या करते हैं, वे जानें; मैं नहीं जाना चाहता। आदिवासी क्षेत्र में घूमता हूं तो उनके घर में रुक जाता हूं, क्योंकि वे अभी आगे बढ़ रहे हैं, उनकी समझ बढ़ रही है।

प्रश्न: गुरु जी, मुझे कैसे पता चलेगा कि मैं कौन हूं? क्योंकि मैं तो निरंतर बदल रहा हूं — कभी अच्छा हूं, कभी बुरा; कभी पापी हूं, तो कभी बहुत पुण्यात्मा। वास्तव में मैं कौन हूं? (P23-0108)

वास्तव में तुम कुछ नहीं हो। कभी पापी हो तो कर्म से हो, पुण्यात्मा हो तो भी कर्म से। पापी में भी "मैं" था, पुण्यात्मा में भी था; अच्छे में भी था, बुरे में भी था — वह जो था, वह तुम हो।

प्रश्न: गुरु जी, अपनी योग्यता को कैसे पहचानें? (P23-0109)

आप आओ अपनी कुटिया में, हम बता देंगे — किस योग्यता के बारे में जानना है? धन, तन, ज्ञान? आप कहोगे धन, तो मैं बोलूंगा चलो एक करोड़ की गाड़ी लेते हैं, दो-तीन — आपको समझ में आ जाएगा। आप कहोगे मुझे कुशती लड़नी है, तो मैं किसी के सामने खड़ा करूंगा — तुम्हें योग्यता समझ में आ जाएगी। ज्ञान की योग्यता जांचनी है, तो किसी ज्ञानी के सामने खड़ा कर दूंगा, समझ में आ जाएगा। सीधी सी बात है — अपोजिट में जब कोई होगा, बात समझ में आ जाएगी। वैसे सबको अपनी योग्यता का पता है।

प्रश्न: गुरु जी, संसार में संग का क्या महत्व है? साधु-संग क्या है? और सत मार्ग और परमार्थ में क्या अंतर है? (P23-0110)

परमार्थ मतलब दूसरे की सहायता करना। और संग का असर तब पड़ता है जब आप उस पर काम करते हो, उसमें जीते हो। संग में हो लेकिन कुछ और कर रहे हो, तो कोई मतलब नहीं है। उसी घर में एक व्यक्ति बहुत अच्छा सज्जन रहता है, और एक बेटा बहुत दुर्जन बन जाता है — संग के बाद आप करते क्या हो, बात वह है। उसी संग में आदमी बहुत बुरा बन जाता है, उसी संग में आदमी बहुत अच्छा बन जाता है।

प्रश्न: गुरु जी, हिंदू धर्म में जाति प्रथा या छुआछूत क्या सही है? यदि हां तो कैसे, और यदि नहीं तो कहां तक गलत है? (P23-0111)

एकदम गलत है। चार वर्ण हैं — ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र। जब पृथ्वी पर कोई भी जीव अपने बच्चों को जन्म देता है, तो उसका मल हाथ या मुंह से साफ करता है — उस समय वह शूद्र होती है; फिर भोजन की व्यवस्था करती है — उस समय वैश्य; फिर समाज से रक्षा करती है — उस समय क्षत्रिय; आखिर में ज्ञान देकर छोड़ देती है — उस समय ब्राह्मण। वैसे ही जो जीवन जीने की शुरुआत करता है — ज्ञान से ब्राह्मण, अपनी रक्षा करता है तो क्षत्रिय, भोजन की व्यवस्था करता है तो वैश्य, अपने मल-मूत्र को साफ करता है तो शूद्र। चार वर्ण प्राकृतिक हैं, पूरा सिस्टमैटिक है, पृथ्वी के हर जीव में चार वर्ण हैं। चार वर्ण आप अपने लिए तो अपना रहे हो; अगर समाज के लिए अपनाने लगे — किसी को सत मार्ग बताने लगे, किसी की रक्षा करने लगे, ईमानदारी से व्यापार करने लगे, लोगों की सेवक बनकर सेवा करने लगे — तो मुक्ति से मोक्ष तक पहुंच जाओगे। चार वर्ण अपनाकर ही मोक्ष पाया जा सकता है; एक भी पकड़ लिया तो भटकते रह जाओगे। महात्मा चारों अपना लेता है — ज्ञान देता है, रक्षा कैसे करो बताता है, ईमानदारी से व्यापार कैसे करो बताता है, सेवा कैसे करो बताता है — इसलिए महात्मा कहता है मुझे जात-पात से मतलब नहीं है। इस संसार में दो चीज जहर की तरह फैल रही हैं: एक — मात-पिता अपने बच्चों को सिखा के कहते हैं "बेटा बड़ा बनना", यह विष का घूंट पीढ़ी दर पीढ़ी बड़े प्यार से पिलाया जा रहा है; दूसरी — जात-पात की व्यवस्था, यह समाज में जहर है जो हमें राग-द्वेष में रखता है। आज वर्ण के हिसाब से देखो — ब्राह्मण कौन, जिसमें ज्ञान देने की क्षमता हो; क्षत्रिय कौन, जिसमें दूसरों की रक्षा करने की क्षमता हो; वैश्य कौन, जिसमें ईमानदारी से व्यापार करने की क्षमता हो; शूद्र कौन, जिसमें सेवा-भाव की क्षमता हो — चार तो छोड़ो, एक भी जल्दी मिल जाए तो समझ लेना। बचपन से हमारे अंदर यह एक परसेंट भी नहीं था — चाहे जिसके साथ बैठ के खा लेते थे।

प्रश्न: गुरु जी, आपका कहना है कि जरूरत में जियो। लेकिन किसी परिवार में एक व्यक्ति यह बात समझ जाता है और बाकी सदस्य नहीं समझते, उनकी जरूरत ज्यादा है — मेरी क्षमता भी ज्यादा है, पर मैं जरूरत में रहना चाहता हूं, और परिवार उससे ज्यादा में रहना चाहता है, डिमांड करता है; मैं प्रमुख हूं तो उनकी जरूरत पूरी करना मेरा कर्तव्य बनता है — इसमें संघर्ष बना रहता है। तो उनके साथ कैसे बनाकर चलें? (P23-0112)

कोई बात नहीं — आप समझते हैं, आप जरूरत में जिएं। फैमिली की उनकी अपेक्षा बनी रहे, तो जितनी उनकी जरूरत है, उतना कर दो, जिस लायक आप हो। फैमिली का मतलब क्या है? एक-दूसरे की भावनाओं को समझना — या एक-दूसरे को गिराने के लिए मजबूर करना? उनके हिसाब से नहीं, आपके हिसाब से भी नहीं — उचित हिसाब से। जो तुमसे बेईमानी करवाए, ऐसे लोगों को छोड़ दो। जरूरत से ज्यादा जियोगे तो बेईमानी करनी पड़ेगी ना। वे डिमांड करते हैं तो मत करो ना — बोलो भैया, तुम कर लो; या तो करके दो। फिर परिवार ही कैसा जो हमें ना समझे, हमें कुछ करने के लिए मजबूर करे, विवश करे? त्याग ही परम सुख है — ऐसे लोगों का त्याग कर दो जो आपको ना समझें; और समझते हैं फिर भी नहीं कर रहे, तब तो और गलत हो गए। जितना आप कर सकते हो, उतना करो; अगर परिवार ज्यादा अपेक्षा रखता है तो उनसे कह दो — हमारी जितनी सामर्थ्य थी, हमने आपके लिए कर दिया; अब हम आपके लिए बेईमानी नहीं करेंगे, आपके लिए अपने आप को गिराएंगे नहीं। उनकी पूर्ति के लिए अपने आप को गिराओ मत। और एक बाप तो यही उम्मीद करेगा कि मेरे बच्चे सेट हो जाएं — तो उन्हें सत्संग सुनाओ, कभी यहां लाओ, धीरे-धीरे उनको समझ में आएगा।

प्रश्न: गुरु जी, नाम जाप करना चाहिए या हमेशा निर्विचार रहें? (P23-0113)

ईमानदारी से सत्कर्म करो। निर्विचार तो हुआ ही नहीं जा सकता — अब निर्विचार होने के लिए लोग प्रयास कर रहे हैं, और नाम के गुरु करवा रहे हैं। निर्विचार मतलब विचार से मुक्त — निर्विकार तो हुआ जा सकता है, निर्विचार नहीं।

प्रश्न: गुरु जी, जिस जगह पर सिर्फ मांस-मछली ही खाना होता है, उनको पाप नहीं लगता? (P23-0114)

वो जानें, उनका काम जाने — हम कौन होते हैं फैसला करने वाले? किसी के बारे में क्यों फैसला करें कि किसको क्या होता है? मुझे यह फैसला करना है कि मेरा कल्याण कैसे होगा, और जो लोग मेरे पास आ रहे हैं, उनके लिए सत मार्ग बताना कि उनका कल्याण कैसे होगा — बस बात खत्म। कौन क्या कर रहा है, उसका परिणाम वो भोगेगा, मुझसे क्या मतलब।

प्रश्न: गुरु जी, परमपिता परमेश्वर जीते-जी कैसे मिल सकते हैं? (P23-0115)

उम्मीद छोड़ो पहले। उम्मीद ही दुख है, उम्मीद ही सुख है — उम्मीद आपके तरीके से पूरी हो गई तो सुख, नहीं हुई तो दुख। तो उम्मीद छोड़ दो, तब आप अपने आप में होंगे।

प्रश्न: गुरु जी, जो अपने आप में रह पाते होंगे, उनको विचार नहीं आते होंगे? क्या विचार पूर्ण रूप से रोके जा सकते हैं? (P23-0116)

जब तक यह जीवन है, तब तक विचार आते ही रहेंगे। जो उस परम स्थिति पर रहे, उनको भी विचार आए — तभी तो अपने लिए भोजन मांगें; भूख लगी, पता चला ना; आराम भी किए, नींद का विचार आया। विचारों से मुक्त नहीं हुआ जा सकता। विचार आते हैं, जाते हैं, कम-ज्यादा होते रहते हैं — जरूरत में आते हैं। लेकिन आप क्यों रोकना चाहते हो? मुझे यही नहीं समझ में आता — जैसे कोई पीछे पड़ जाए कि मेरे सिर पे बाल ना उगें ऐसा उपाय बताओ। ये अपने आप देश-काल-स्थिति-परिस्थिति में आते हैं, जाते हैं; इसे रोकना चाहकर आप अपने आप को भी परेशान कर रहे हो और सबको परेशान कर रहे हो।

प्रश्न: गुरु जी, जैसे आंख बंद करके बैठते हैं, तो क्या इसको ध्यान नहीं बोला जा सकता? शुरुआती दौर में लोग मूर्ति का या मंत्र का सहारा लेते हैं, लेकिन एक स्थिति होती है जब किसी का सहारा नहीं लिया जाता, अपने आप में रहना होता है — उसको ध्यान बोलना ठीक नहीं रहेगा? (P23-0117)

आंख बंद करके बैठ गया तो ध्यान हो गया? आंख खोल के बैठूँ चाहे बंद करके — इसको ध्यान थोड़ी कहते हैं। ध्यान तो "चाहिए" में घट रहा है। ध्यान रखना — ध्यान में दो होते हैं: एक देखने वाला, और कोई सामने। तो "कुछ नहीं चाहिए" की स्थिति में ध्यान की आवश्यकता भी नहीं है — उसी में तो आप हो। ध्यान से मुक्त होना है; ध्यान ही आपके भटकाव का कारण है। सबसे ज्यादा अगर आप परेशान हो तो ध्यान से, एक आदत डाल दी गई है — ध्यान, ध्यान, ध्यान। किताबें पढ़ने से भी परेशानी हुई है — समाधि होती है, उसमें कोई विचार नहीं होते, सविकल्प-निर्विकल्प, सहज समाधि — सब किताबों ने भ्रमित कर दिया, पढ़-पढ़ के सब परेशान हो गए; कितनी ध्यान की विधियाँ बांट दीं।

प्रश्न: गुरु जी, आप कहते हैं कुछ नहीं चाहिए में आ जाएं — तो जीवन कैसे कटेगा? आम तौर पर तो शरीर और मन की जरूरत पूरी करते-करते जीवन कट जाता है, बड़े दुख मिलते हैं। (P23-0118)

आपने जरूरत में जीना चालू किया — सिर्फ जरूरत में — तो वह "कुछ नहीं चाहिए" ही है। आप यह बात क्यों नहीं समझ रहे? जरूरत में जीना चालू कर दिया, सिर्फ जरूरत में, तो वही कुछ नहीं चाहिए है — उसी में तो आप होते हो, उसी में तो आना है, उसी में ज्ञान है।

प्रश्न: गुरु जी, कल आप बोल रहे थे कि एक दिशा में योगी (खोजी) चलता है — तो वह दिशा कौन सी है? (P23-0119)

खोज जहां ले जाए। दस दिशाएं हैं — खोजी उस दिशा में चलता है जहां खोज लेकर जाए; कुछ बोल नहीं सकते, हो सकता है जहां जा रहा था वहां से कहीं और चला जाए। आखिरी में खोज भी खत्म हो जाती है — वहीं पर खोजी मरता है। जब खोज खत्म होगी तो खोजी भी खत्म हो जाएगा, बस बात खत्म। अनुभव करते-करते अनुभव करता बचता है; अनुभव करने के लिए जब कुछ नहीं रहता, तो करता भी खत्म हो जाता है। पानी से बर्फ बना, बर्फ के हर कण में पानी मौजूद है; बर्फ से पानी नहीं हुआ — बर्फ मिट गया, पानी तो पहले से मौजूद था, बर्फ एक भ्रम था, वो हट गया। वैसे ही आत्मा से जीव हुआ, लेकिन जीव आत्मा नहीं होगा — जीव का नाश हो जाएगा, शेष आत्मा बचेगी। जीव नाम उसी का है जिसमें इच्छा है।

प्रश्न: गुरु जी, जीव अपने नाश होने से भी डरता है और ब्रह्म से मिलना भी चाहता है — दोनों करना चाहता है। तो क्या जीव का नाश गुरु के सानिध्य में हो जाता है?

(P23-0120)

रहेगा तो पक्का मिट जाएगा — मेन बात रहना है, और सबसे कठिन है गुरु के पास रहना। अगर पक्का उपलब्धि चाहिए तो और कोई रास्ता नहीं — उसकी शरण में, सानिध्य में जीना ही पड़ेगा, रहना पड़ेगा। लेकिन उसकी शरण में रहना सबसे कठिन है, क्योंकि वह आपका अस्तित्व मिटा देगा। कोई अकेले अपनी इच्छा से, प्रयास से चाहे तो नहीं होगा। जैसे संसार में कोई मादा योग्य है, कोई नर भी योग्य है, लेकिन दोनों ना मिलें तो वह सोचे कि मैं मां बन जाऊंगी — ऐसा हो ही नहीं सकता; मादा को नर का, नर को मादा का सहारा लेना पड़ेगा। वैसे ही इस भवसागर से मुक्त होने के लिए आपको गुरु का सहारा तो लेना ही पड़ेगा।

प्रश्न: गुरु जी, मैं तो नाम जाप करता हूँ ताकि प्रेम मिले, क्योंकि सुना है नाम जाप से प्रेम मिलता है — पर अभी तक तो कुछ मिला नहीं। (P23-0121)

तुम ही पक्का कर रहे हो, तुम ही कर रहे हो कि मिला नहीं — क्या बताएं? इसलिए ईमानदारी-सत्कर्म करो, तुरंत आपको एहसास भी होने लगेगा — तुरंत मतलब तुरंत, यह मैंने फील किया है। आप कभी किसी के लिए बिना मतलब का करके तो देखो।

प्रश्न: गुरु जी, बुद्ध और महावीर के तो कोई गुरु नहीं थे — फिर गुरु क्यों जरूरी है?

(P23-0122)

बुद्ध-महावीर के अनेकों गुरु थे। ऐसे ही जीवन में बहुत गुरु होते हैं — अगर आप गिनना भी चाहें तो नहीं गिन सकते। जैसे मां एक है, लेकिन मां की तरह बहुत लोगों ने आपको भोजन कराया होगा, आपको याद नहीं है — वैसे ही जीवन में बहुत गुरु होते हैं।

प्रश्न: गुरु जी, कुटिया में काम करते-करते शरीर एकदम थक गया और बीमार हो गया, तो रात को मैंने निर्णय कर लिया कि काम बीच में छोड़कर घर चली जाऊं ताकि आप मुझे बीमार देखकर और परेशान न हों; सुबह थोड़ा ठीक लगा तो निर्णय किया कि मैदान छोड़कर नहीं जाना। उस समय मेरी जीवात्मा का क्या हाल था — मैंने किसको महत्व दिया? (P23-0123)

बात क्या है, पूरी तरह देखो। क्या 100% यह है कि मैंने सामने वाले के बारे में सोचा कि हम बीमार रहेंगे तो वह भी तकलीफ में आएगा? यह 100% है तब तो यह मानवता की बात है। और क्या इसके साथ यह भी है कि कहीं हम अपने आप को, अपने शरीर को बचाना चाहते थे? क्योंकि अभी तो हम शरीर से अलग हो नहीं पाए हैं। बुद्धि के लेवल से तो कह रहे हैं कि मैं अलग, शरीर अलग; लेकिन जब देश-काल-स्थिति-परिस्थिति में शरीर को तकलीफ होती है और हम शरीर का साथ देते हैं, तो इसका मतलब मैं शरीर ही हूं। अगर मैंने किसी काम को लिया है, किसी जिम्मेदारी को लिया है — मुझ पे किसी ने थोपा तो है नहीं — तो अधूरे में छोड़कर जाने की इच्छा कहां से प्रकट हुई? मैं इसी में मिट जाता। अगर मैं जा रहा हूं तो इसका मतलब मुझ में ताकत है; तो उस ताकत को मैं यहां उपयोग क्यों नहीं कर सकता? मैं अपने आप को बचाकर क्या करूंगा? पहले भी तो मैं स्वस्थ था, क्या कर लिया? स्थिति-परिस्थिति ही तय करवाती है कि आप किसमें लिप्त हो। जब तक आप स्वस्थ थे, अनुकूल परिस्थितियां थीं, तो आपने काम को महत्व दिया — पहले काम, बाद में मैं। अस्वस्थता में, तकलीफ में, विपरीत परिस्थितियों में आपने जिसे महत्व दिया, आप वही हो। देखना है कि विपरीत परिस्थितियों में मैंने शरीर को महत्व दिया, काम को महत्व दिया, या जिसके साथ हूं उसको महत्व दिया। अगर 100 में 101% यही है कि सामने वाले को दिक्कत न हो इसलिए जाना चाहता हूं, तब तो जाने से भी आपका स्तर उठ जाता। लेकिन अगर एक प्रतिशत भी अपने आप को बचाने का भाव था — कि मुझे आराम मिल जाए, काम तो होते रहेंगे — तो जाकर आप गिर जाते, और अच्छे तरीके से गिर जाते, क्योंकि फिर आपने अपने आप को महत्व दिया। तो मुझे देखना है कि मैं पूरी तरह क्यों नहीं मिट पाता? मैं हर बार अपने आप को ही क्यों बचाता हूं? मैं आखिर तक क्यों समर्पित नहीं हो पाता, बीच में क्यों डगमगा जाता हूं? शुरू में अगर आप उस लायक नहीं हो तो आपको लक्ष्य के लायक बनाया जाता है, धक्का मारा जाता है; लेकिन मैदान में उतरने के बाद आप भागते हो तो उसे भगोड़ा कहा जाता है, कायर कहा जाता है। फिर उस व्यक्ति को कोई धक्का नहीं मारता, क्योंकि पता चल जाता है कि यह बीच से ही भागेगा। शुरुआत में किसी भी काम में बहुत लोग होते हैं, देखा-देखी भीड़ बहुत चलती है, लेकिन आखिर तक कोई-कोई बचता है — और आखिर तक वही बचता है जिसने काम को महत्व दिया, अपने आप को

नहीं। आप किसी कार्य में लगे हो तो 0.1 नहीं, 100% लगे हो, चाहे उसमें कोई भी काम मिल रहा हो। अब आपको देखना है कि क्या आप 100% उस काम में दे रहे हो।

प्रश्न: गुरु जी, जीवात्मा जब बहुत दुखी होती है, जैसे लू में जल रही हो, तो इस तरफ भागती है; लेकिन जैसे ही थोड़ी छाया, थोड़ी राहत मिल जाती है, उसकी दबी हुई इच्छाएं निकल आती हैं और वह फिर उन इच्छाओं में भाग जाती है — लू में जो तपा रही थी, वह भूल जाती है। यह क्या माजरा है? (P23-0124)

अपनी समझ का उपयोग करना है कि हम जब दुखी हुए, परेशान हुए, तो कोई मकसद लेकर आए थे। तो देखना यह है कि क्या मैंने उस मकसद पे पूरी तरह काम करके उस लक्ष्य तक पहुंच पाया, उस उद्देश्य को पूरा कर पाया? अगर मैं इतनी लू में जल रहा हूं तो देखना कि मैं इस गर्मी में घुसा कैसे? किसी ने फेंका तो है नहीं मुझे; कोई किसी को जबरदस्ती घुसा नहीं सकता। तो मैं कोई इच्छा, कोई लालच ही लेकर आया होगा। तपती लू में उस टाइम पे मुझे अपना पूरा बैकअप देखना पड़ेगा — तू यहां क्या करने आया? अब तेरे को छाया चाहिए, और जैसे ही छाया मिल जा रही है, फिर तेरे वही नाटक चालू हो जा रहे हैं। कल की घटना बता रहा हूं — एक महिला आई थी, उसका पति और बेटा भी। जब मैंने कहा कि वहां बैठ, तो वह जाने लगी; बेटा बोला मैं मम्मी के साथ ही जाऊंगा, बाप ने कहा तू रुक, फिर भी वह मम्मा के साथ ही गया। उस महिला ने कहा कि मैं समझ जाती हूं लेकिन ठहर नहीं पाती। तो मैंने कहा कि आप शब्दों से समझते हो। जैसे मैंने मैप देखकर या किसी से पूछकर सारा रास्ता समझ लिया कि यहां से यहां जाना है — तो क्या मैं लक्ष्य तक पहुंच गया? नहीं, अभी तो घर पे सोफे पर बैठकर बस देख रहा हूं। आपने समझा है, उस स्थिति में पहुंचे नहीं; उस स्थिति में पहुंचने के लिए यात्रा करनी पड़ेगी, काम करना पड़ेगा। फिर उसका कहना था कि जहां भी हम हैं, परमात्मा की वजह से हैं। तो बोला — जहां भी हो, परमात्मा की वजह से नहीं, अपनी मर्जी की वजह से हो। तुम यहां बैठी हो, तुम्हारा पति उधर घूम रहा है; कुछ देर पहले यही बेटा मम्मा-मम्मा चिल्ला रहा था, अब वही बेटा बाप के साथ खेत-खलिहान देख रहा है। तुम्हारी इच्छा ने तुम्हें मेरे पास बिठा रखा है, पति की इच्छा खेत-खलिहान देख रही है, बेटे को अब बाप के साथ कुछ मिल रहा है। वह अभी भी बाप के साथ नहीं है, अपनी इच्छाओं के साथ है। तो यहां सब अपनी-अपनी इच्छा से घूम रहे हैं। तो देखो कि आप जिसके लिए गए हो, उसे पूरी तरह क्यों नहीं कर पाते? गड़बड़ क्या है — आधे-अधूरे से भागना। शुरुआत करते हो, फिर बीच में से ही भाग जाते हो। बीच में से कभी नहीं भागना चाहिए। लक्ष्य की शुरुआत में आपकी स्थिति और रहेगी, धीरे-धीरे उस तरफ बढ़ोगे तो स्थिति और रहेगी; मुझे हर स्थिति-परिस्थिति में सिर्फ लक्ष्य दिखना चाहिए, चाहे मुझे अपने आप को मिटाना भी पड़े — मैं तो एक दिन मिट ही जाऊंगा। जिस शरीर को बचा रहे हो, वह शरीर पहले भी तो था, फिर भी दुखी थे। मैं बचाकर क्या करूंगा? स्वस्थ ही हो जाऊंगा तो क्या हो जाएगा? स्वस्थ होना है तो अपने लक्ष्य की तरफ बढ़ते हुए हो जाऊं, क्योंकि

जिसको छोड़कर मैं गया, वह तो बहुत आगे निकल जाएगा; जहां से छोड़कर गए वहां वह मिलेगा नहीं, और जहां वह गया वहां तुम जा नहीं पाओगे। लक्ष्य को भूल गए और जहां गए वहां का कचरा ले आएंगे। लक्ष्य का चुनाव मैंने ही तो किया। मैं लक्ष्य की तरफ बढ़ रहा हूं तो भाग क्यों रहा हूं? भाग रहा हूं, इसका मतलब लक्ष्य के बहुत करीब हूं। मैं अपने शरीर को क्यों महत्व दे रहा हूं? इसका मतलब अभी मैं शरीर ही हूं, तभी तो अपने आप को बचा रहा हूं। अनुकूल परिस्थितियों में तो कह देता हूं कि मैं और शरीर अलग, लेकिन विपरीत परिस्थितियों में मैं ही शरीर हूं।

प्रश्न: गुरु जी, शरीर इतनी पीड़ा दे रहा है कि खाया-पिया भी नहीं जा रहा और काम भी अलग-अलग तरह का बहुत है, जो टाला भी नहीं जा सकता। मुझे लग रहा है कि शायद यह मेरा आखिरी कवच है जो टूटना बाकी है। अगर मैं मैदान छोड़कर घर जाकर ठीक हो जाऊं, फिर दोबारा लग जाऊं तो? (P23-0125)

कोई भी हो, टूट तो रहा ही है। अगर हम इसमें लगे हैं तो इसका मतलब मैं आगे ही बढ़ रहा हूँ — कुछ तो टूट रहा है और हम आगे बढ़ रहे हैं। जब मैं इस संकल्प को पूरा करने निकल रहा था तो मैं आप लोगों को मना कर रहा था कि आप लोग मत चलो, इतना आसान नहीं है। मैंने कहा भी था कि हो सकता है हमें किनारे सोना पड़े, भूखा रहना पड़े; तो आप लोगों ने कहा कि हम हर स्थिति में रहेंगे। अगर आप मेरे साथ हो तो आपके साथ मैं भी हूँ; मैं लक्ष्य के साथ भी हूँ, आपके साथ भी हूँ। लेकिन मैंने कभी भागने का नाम लिया? मैं भागूंगा कहां? आपको लगा कि वहां मुझे आराम मिल जाएगा, लेकिन मेरे तो काम में ही मुझे आराम है, चाहे जैसी भी स्थिति-परिस्थिति बन जाए। यह पैसा, व्यवस्था कोई काम नहीं आएगा — मुझे मालूम था; आखिर में तो यह शरीर ही हथियार है। आप वहां जाओगे अपने आप को बचाने, तो आपका शरीर स्वस्थ हो जाएगा लेकिन आप बीमार हो जाओगे; और अगर आप अपने लक्ष्य की तरफ रहे तो आपका शरीर बीमार हो सकता है लेकिन आप स्वस्थ हो जाओगे। मुझे मालूम था किन-किन परिस्थितियों का सामना करना पड़ेगा, क्योंकि मैं कर चुका हूँ — भोजन सामने रहेगा, तुम खा नहीं सकते; पानी सामने रहेगा, पी नहीं सकते; कुर्सी सामने रहेगी, बैठ नहीं सकते; बिस्तर सामने रहेगा, सो नहीं सकते। इसीलिए मैं सचेत कर रहा था। तो आपको यह जांचना है कि जब मैं सब कुछ स्वीकार करके चला, सामने वाला भ्रमित करके नहीं लाया, स्वेच्छा से आया, तो मुझे दो बार ऐसा भाव क्यों आया? इसमें भागने से अच्छा न आना ज्यादा ठीक है, क्योंकि भागने में फिर व्यक्ति गिर जाएगा और जिंदगी में मौका भी उसे नहीं मिलेगा। जो चला ही नहीं, वह कभी न कभी चल पड़ेगा, कभी न कभी उसके ऊपर भरोसा किया जाएगा; लेकिन बीच में अगर कोई भाग गया तो उस पे दोबारा भरोसा नहीं होगा, क्योंकि पता है कि यह बीच से ही भागेगा, यह ताप सहन ही नहीं कर पाएगा। अब आपको सूक्ष्म तरीके से देखना है कि आखिर दो बार ऐसा भाव मेरे अंदर क्यों पैदा हुआ।

प्रश्न: गुरु जी, रात को मैं कहती हूं कि जाऊंगी और सुबह कहती हूं कि नहीं जाऊंगी — घर, सुविधाएं सब हैं, लेकिन होश में आती हूं तो कहती हूं कि वह भी नहीं चाहिए। यह द्वंद्व क्यों है? मेरे अंदर दृढ़ता क्यों नहीं आ रही, मैं बार-बार डगमगा क्यों जाती हूं? (P23-0126)

यहां आश्रम बनाने का मेरा कोई संकल्प नहीं था; संकल्प अंदर से निकला, वह चाहे परमात्मा का हो चाहे जिसका भी हो। मेरा बस इतना कहना है कि अब यहां कुटिया बन गई है, यहां कोई भी साधक साधना करने आए, बस उसका आत्मिक कल्याण हो। आपकी भाभी ने कहा कि यह बहुत समझदार है। मैंने कहा — मुझे नहीं लगती। अगर तू इसलिए समझदार मानती है कि यह सब काम कर लेती है, तो ये सब काम तो पैसे से भी करवाए जा सकते हैं; इसके पहले भी मैं काम कर चुका हूं। मैं समझदार उस दिन मानूंगा जिस दिन यह उस परम स्थिति को उपलब्ध हो जाएगी; उसके पहले नहीं कह सकता। और यह भी बात है कि यही काम करते-करते यह उस स्थिति तक पहुंचेगी; इसको काम करना भी पड़ेगा, अगर काम न करे तो पहुंच भी नहीं पाएगी। इस दुनिया में कोई साधना करके पहुंचता है — मैं साधना करके पहुंचा — कोई सेवा करके पहुंचता है; किसी में साधना का गुण होता है, किसी में सेवा का। साधना में भी स्थिति ऐसी रहती है — मेरे पांव इतने सूजे रहते थे, रात को पैर फटते थे, नींद नहीं आती थी; पैरों में चप्पल डालते-डालते आंसू आने लगते थे, उसके बाद भी मैं 20-30 किलोमीटर चलता था। लोगों ने कहा दवा लगा लो; मैंने कहा पैर कट भी जाएंगे तो दवा नहीं लगाऊंगा, क्योंकि मैं आखिरी यात्रा पे हूं। तो चाहे आप साधना करो, चाहे सेवा करो — आपको डर को पार करना पड़ेगा, मृत्यु को चुनना पड़ेगा, तभी आप पार कर पाओगे। जब तक अति नहीं होगी, वह डर, वह संशय छिपा रहता है — इतने सूक्ष्म रूप से कि तुम्हें भी नहीं दिखता, जैसे बहुत सी चीजें खुली आंखों से नहीं, लेंस से दिखती हैं। ये कब दिखते हैं? जब विपरीत परिस्थितियां आती हैं। दिखेंगे, तभी तो नाश होगा; देख नहीं पाओगे तो नाश भी नहीं होगा। जब वह डर दिखे तो देखना है कि आप किसे महत्व देते हो — डर को या लक्ष्य को। कई बार ऐसी परिस्थितियां आएंगी कि अगर हम ऐसे ही करते रहे तो खत्म हो जाएंगे; लेकिन उस खत्म होने में भी मैं तो हूं, मेरा लक्ष्य तो है। इच्छा का नाश तभी होगा जब विपरीत परिस्थितियां बनेंगी। शरीर को बचाना चाहता हूं, इसका मतलब शरीर से कुछ करना चाहता हूं। इच्छा है तो डर है, डर है तो इच्छा है; और जब तक डर है तब तक वह परम स्थिति नहीं मिलेगी। डर इसलिए आता है कि अगर यह शरीर ही निकल गया तो मेरी इच्छाएं कैसे पूरी होंगी, मैं भोगूंगा कैसे। साधना करते-करते या सेवा करते-करते स्थिति यह बनेगी कि आगे मौत ही है, और मौत हो भी सकती है; लेकिन मौत भी हो जाएगी तो अगला शरीर वहीं से मिलेगा, यात्रा से पार करके मिलेगा। ऐसी स्थितियां बनेंगी कि आगे बढ़े तो

मर जाएंगे, पीछे गए तो बच जाएंगे — उस समय क्या फैसला होता है, वह क्षण मायने रखता है। जीवन को चुना तो आपने इच्छा को चुना; मृत्यु को चुना तो आपने लक्ष्य को चुना — कोई बात नहीं, मर जाएंगे लेकिन करने में मरेगे। मैं इससे गुजर चुका हूं, मेरे साथ कई बार हुआ है और हर बार मैंने पार किया है; मैं कभी पीछे नहीं हटा, मेरे लिए पीछे तो था ही नहीं, सिर्फ आगे था, चाहे जीवन हो चाहे मृत्यु। अभी इससे भी भयानक स्थिति बन सकती है, क्योंकि जैसे-जैसे आप लक्ष्य के करीब होते हो वैसे-वैसे थकते हो — जैसे एक किनारे से दूसरे किनारे जा रहे हो तो दूसरे किनारे तक पहुंचते-पहुंचते डूबने लगते हो। अब देखना है कि डूबने में आप आगे की तरफ हो या वापस की तरफ। वापस जाने में दिमाग में बैठा है कि कंफर्ट जोन में पहुंच जाऊंगा, पर ताकत बची नहीं, वहां तो निश्चित डूब जाएगा; आगे नहीं भी पहुंचे तो मुंह तो मंजिल की तरफ है, कायर, डरपोक तो नहीं कहलाऊंगा। हर बात मैं इसलिए बताता हूं कि मैं गुजर चुका हूं। आपका धन-दौलत, पैसा, टैलेंट, व्यवस्थाएं सब धरी की धरी रह जाएंगी; आपके साथ एक घुटन होगी, क्योंकि आप कुछ पार कर रहे हो — यही तो तपस्या है। बस अपनी बनाई हुई हर धारणा को तोड़ना है और लक्ष्य को कभी नहीं छोड़ना है; कोई भी स्थिति-परिस्थिति आ जाए, उसके लिए तैयार रहना है। जैसे-जैसे आगे बढ़ोगे, वैसे-वैसे विपरीत परिस्थितियां आनी ही आनी हैं।

प्रश्न: गुरु जी, यात्रा में बाहर तो सब दिखता है, पर अंदर कुछ दिखता नहीं कि कहाँ पहुँचे, कितना बाकी है, इसलिए लोग भाग जाते हैं। लेकिन गुरु तो देख रहा है — जब कोई एक कदम बाकी रहते भागता है तो गुरु उसे रोकता क्यों नहीं? क्या आप जीवात्मा की स्वतंत्रता नहीं छीनना चाहते? (P23-0127)

एक होता है — मैं क्या करूँ? जैसे आप कहते कि मेरी तबीयत खराब है, इस स्थिति में मुझे क्या करना चाहिए, तो मैं आपको आपके हित के लिए सलाह देता। लेकिन जब व्यक्ति कह रहा है कि मैं जा रहा हूँ, तो फिर वहाँ क्या बोला जा सकता है? गुरु हमेशा यह देखता है कि यह आंतरिक क्या चाहता है, इसकी क्या इच्छा है; क्योंकि इसकी इच्छा हम मार नहीं सकते, इसकी इच्छा यही मार सकता है। तो वह देखता है कि शब्दों से आप क्या कह रहे हो और आंतरिक क्या चाहते हो, और उसी हिसाब से आपको निर्णय देता है। हमें कभी भागना नहीं चाहिए; और कोई भी परिस्थिति हो तो जिसके साथ मैं हूँ उसके सामने बात को रखूँ, निर्णय नहीं। निर्णय रखोगे तो गड़बड़ हो जाएगी, फिर वह कुछ नहीं बोलेगा, कहेगा ठीक है — क्योंकि उसको मेरे से कुछ चाहिए नहीं। घर पे माँ-बाप को कहोगे कि हम यह कर रहे हैं, तो वे फटाक से रोक देंगे; लेकिन गुरु को तो कुछ चाहिए ही नहीं, तो वह कहेगा — तू पहले अपनी इच्छाएं पूरी कर ले, बहुत लोग हैं। यह काम रुकने वाला नहीं है, इसका वेग ही ऐसा है। तुम रुक गए तो तुम्हारा ही नुकसान है, क्योंकि आपकी जगह कोई और ले लेगा; जैसे ही आप गए, जगह भर गई, फिर दूसरे दिन भी आओ तो नहीं मिलेगी। प्रकृति का नियम है, कोई जगह खाली नहीं छोड़ती।

प्रश्न: गुरु जी, जैसे बच्चा टॉफी की जिद करता है और मां जानती है कि इससे उसके दांत सड़ेंगे, तो वह उसे धीरे से दूसरे ऑप्शन में लगा देती है — क्या गुरु भी ऐसे नहीं कर सकते? (P23-0128)

वह बालक अबोध है, लेकिन यहां साधक अबोध नहीं है; उसे अच्छे-बुरे दोनों का ज्ञान है, इसके पास पूरी समझ है। तभी तो यात्रा करने आया; अगर समझ कम होती तो यात्रा करने आता ही नहीं, इसी संसार में पड़ा रहता। अगर यह अपने स्व की यात्रा करने आ गया तो इसका मतलब इसकी समझ विकसित हो गई है; अब इसके निर्णय पे ही काम किया जा सकता है। अगर इसके निर्णय पे काम नहीं करेंगे तो हो सकता है बहुत देर बाद भागे, क्योंकि इसने इच्छा बना ली है। जब मानसिकता बन गई कि मैं उस जगह ठीक हो जाऊंगा, और अगर हम उसे रोक लें तो वह और परेशान हो जाएगा; तो जा, उस जगह ठीक होकर आ जा — लेकिन ठीक होकर आने में, जिस लक्ष्य में तू था, उससे तो बहुत पीछे रह गया, वह तो बहुत आगे निकल जाएगा। यहां का कोई काम रुकता नहीं; आप हो तो भी नहीं रुकेगा, नहीं हो तो भी नहीं रुकेगा। अपनों की कुटिया में कितने लोग आए-गए, कोई काम रुका? जिसको रहना है रहे, जिसको जाना है जाए। जब यह पूछा जाता है कि मैं क्या करूं, तब गुरु उचित मार्ग बताता है। जब उसने खुद फैसला ही कर लिया कि मुझे यह करना है, तो उसने गुरु को महत्व ही नहीं दिया, क्योंकि फैसला ही सुना दिया। अपनी जिंदगी का वह खुद मालिक है। जिसके सानिध्य में मैं हूं, वह तो आपको कुछ होने ही नहीं देगा; आप सबसे ज्यादा उसी के पास सुरक्षित हो। लेकिन अगर आपको लगा कि यहां नहीं, वहां सुरक्षा है, तो ठीक है, जाके देख लो; रोक भी नहीं सकते, क्योंकि तुमने निर्णय कर लिया। उसे पता है कि वहां तुम और असुरक्षित हो जाओगे, लेकिन अब रोक नहीं सकते। तो देखना है कि किस भाव में मैंने शब्दों को रखा है, वैसे ही हमें जवाब मिलेंगे। जो चीज मेरे भाव से निकली, इसका मतलब मैं वहीं पे हूं; विपरीत परिस्थितियों में आदमी जहां होता है वहीं का फैसला लेता है। अनुकूल नहीं, विपरीत परिस्थितियां ही व्यक्त करती हैं कि आपकी स्थिति क्या है। विपरीत परिस्थितियां बननी ही बननी हैं, लेकिन अपने को आगे ही रखना है — चाहे जिएंगे, चाहे मरेंगे, लक्ष्य के साथ। लक्ष्य को महत्व दो, क्योंकि लक्ष्य में आप हो; लक्ष्य गया तो सब गया, मतलब आपने अपने आप को खो दिया। जैसे एक बार टॉच जलाई, जहां तक दिखा वहां तक देखा, बुझने के बाद वहीं आ गए — एक बार अगर आप लौट आए तो उससे भी ज्यादा नीचे गए; जितनी तेजी से आप इधर जा रहे थे, उतनी तेजी से फिर नीचे जाओगे, क्योंकि आपके अंदर एक ताकत आ गई है, अब वह ताकत गिरने में उपयोग होगी। तो ध्यान रखना है कि कोई भी स्थिति-परिस्थिति आ जाए, मुझे लक्ष्य की तरफ ही आगे बढ़ना है, वही काम करना है जो मुझे लक्ष्य की तरफ ले जाए, क्योंकि लक्ष्य का चुनाव मैंने

किया है। और जिसके सानिध्य में हैं, उसके सामने अपनी बात किस भाव में रख रहे हैं — अगर निर्णय करके रखा, तब तो बात ही खत्म कर दी; बात ऐसे रखो कि मेरी स्थिति यह हुई है, मैं क्या करूं, मुझे क्या करना उचित होगा।

प्रश्न: गुरु जी, कोई साधक लंबी यात्रा करके, बहुत मशक्कत करके 99 पर पहुंचा है और वहां से भी एक कदम पीछे लौट आता है, क्योंकि उसे पता नहीं चलता कि वह कहां तक पहुंचा। गुरु तो उसी रास्ते से गुजरा है और उस पर पूरा काम कर रहा है — तो क्या 99 पर गुरु उसे संभाल नहीं सकता, थोड़ा आराम करवा दे, समझा दे, या धक्का मार दे, जैसे लोग किसी की बुरी घड़ी टलने तक उसे रोक लेते हैं? (P23-0129)

वह समझाएगा तब, जब आप निर्णय नहीं रखोगे। अगर आपने कह दिया कि मैं तो थक गया, मैं तो जा रहा हूं — फैसला ही ले लिया — तो वह स्वतंत्रता नहीं छीन सकता। ऐसा नहीं है कि वह रोक नहीं सकता, रोक सकता है; लेकिन वह इच्छा का नाश नहीं होगा, जिसे वह पूरी करने भाग रहा है। तो फिर उस इच्छा को पूरा करने के लिए बंदा कभी न कभी जाएगा ही। अगर बंदा 99 पर पहुंचा और अब उसकी कोई इच्छा हुई, तो गुरु मना करेगा ही नहीं; अब वह चला गया अपनी इच्छा पूरी करने। अब इच्छा पूरी करने में उसको कितने जन्म लग जाएं, और वह 99 वाला माहौल फिर कितने जन्मों में बने — कुछ नहीं कहा जा सकता। जब तक पूरी इच्छाएं खत्म नहीं हो जातीं, तुम 100 हो भी नहीं सकते; 100 तभी होगा जब कोई इच्छा ही नहीं रहेगी।

प्रश्न: गुरु जी, तो क्या मैं रास्ते में चलते-चलते रोज अपने आप को चेक करती रहूँ कि अब तुझे क्या चाहिए, ताकि 99 पर जाकर फिर "चाहिए" न बोल दूँ? (P23-0130)

चलने से पहले ही पक्का कर लो कि तुम्हें फाइनली क्या चाहिए। चेक नहीं करना है। मेरी तो अनंत इच्छाएं हैं; मुझे किसी इच्छा को महत्व नहीं देना है, क्योंकि ये सब इच्छाएं मैंने भोग ली हैं। जैसे-जैसे आगे जाओगे, वैसे-वैसे इच्छाएं उठेंगी, और वैसे-वैसे पूरी करने की सामर्थ्य भी आएगी — दोनों बातें। ऐसे बैठकर सोचोगे कि क्या इच्छाएं हैं, तो वे दिखेंगी भी नहीं। वे अंदर दबी हुई हैं; जैसे-जैसे आगे जाओगे, जैसे-जैसे ताकतवर होगे, वे जन्म लेंगी। एक समय ऐसा था कि वह इच्छा पूरी नहीं कर पा रहे थे, लेकिन अब वह बड़ी आसानी से पूरी हो जाएगी, सारे ऑफर सामने आ जाएंगे — और वह आसानी से इच्छा पूरी करने में फिर गिर जाओगे। जब खाने को कुछ नहीं था तो उपवास कर लिया; अब खाने को इतना सामान है। तो किसी भी इच्छा को महत्व नहीं देना है। देखना यह है कि आप किसे महत्व देते हो — इच्छाओं को पूरा करते हो, तब तो आप वहीं गिर गए; या इच्छाओं को छोड़कर आगे ही बढ़ जाते हो। ऑप्शन कभी मत पकड़ो। जिसके लिए निकले हैं, सिर्फ वही करेंगे, उसके अलावा कुछ नहीं। अगर कुछ और करूंगा तो तभी, जब वह मेरे लक्ष्य तक पहुंचने में सहायक होगा, नहीं तो नहीं — इतना पक्का करके चलोगे तभी आप पहुंच पाओगे। यह बड़ा सूक्ष्म है, बहुत सूक्ष्म; होश भी उतना चाहिए, तत्परता भी उतनी चाहिए। यहां अगर आप बीमार भी पड़े हो तो भी लक्ष्य की तरफ हो — कम से कम रास्ता तो चेंज नहीं करो। अगर आप जिनके साथ हो उन्हीं के साथ रहते, तो जितनी तेजी से वे आगे जा रहे हैं उतनी तेजी से आप भी जा रहे हो, भले आपके द्वारा कुछ नहीं हो रहा, आप बिस्तर पे ही पड़े हो। ऐसा तो है नहीं कि घर में रहने वाला बीमार नहीं होता; डॉक्टर के पास रहने वाले भी बीमारी से जूझ रहे हैं। तो सोच-बूझ, समझ के साथ आगे बढ़ो।

प्रश्न: गुरु जी, क्या मौन ही परम है? क्या मौन में बैठे रहने से जीवन-मुक्ति और मोक्ष सिद्ध होगा? (P23-0131)

नहीं। मौन तो — जब आपको कुछ नहीं चाहिए, आप जीते हो किसी और के लिए, करते हो किसी और के लिए — तो आप बोलकर भी मौन हो। मौन में कितनी देर बैठे-बैठे से जीवन-मुक्ति और मोक्ष सिद्ध होगा? नहीं, ऐसा संभव नहीं है। देखिए, अब जब आप किसी और के लिए कार्य करते हो, ठीक है, तो आप बोलकर भी मौन हो।

प्रश्न: गुरु जी, लोग बहुत लालची हो गए हैं, पैसों के लिए मानवता भी बेच देते हैं। जीवन है तो रोजाना कई लोगों से लेनदेन भी होता है। ऐसे लालची लोगों से स्वयं को कैसे निकालें, इस राग-द्वेष से कैसे मुक्त हों? (P23-0132)

ईमानदारी से अपना काम करें, और किसी से भी अगर लेनदेन करें तो प्रूफ होना चाहिए, लिखा-पढ़ी होना चाहिए। मैं तो यही कहूंगा।

प्रश्न: गुरु जी, ईमानदारी, सत्कर्म, सत्संग, अध्यात्म और धर्म बार-बार भार जैसे लगते हैं। ऐसा क्यों? (P23-0133)

भार जैसे लगते हैं इसलिए कि मानवता को खत्म कर दिए हो अपने अंदर से। धर्म की परिभाषा है — अपने अंदर मानवता को जागृत करना। यह है धर्म की परिभाषा।

प्रश्न: गुरु जी, एक व्यक्ति का माता-पिता के प्रति और गुरु के प्रति क्या कर्तव्य हो? (P23-0134)

माता-पिता और गुरु के प्रति यही कर्तव्य है कि अगर उन्होंने मेरे लिए किया है, तो जरूरत पड़ने पर उनके लिए भी मैं कुछ करूं। यही कर्तव्य है। और गुरु जो मार्ग बता रहा है, उस मार्ग पर चलके अपना आत्मिक कल्याण करूं। जो भी मार्ग बता रहा है, पहले आप समझ लो — गुरु ज्ञान का प्रतीक है — और एक बार उसके बताए हुए मार्ग को समझकर निकल लो।

प्रश्न: गुरु जी, आपके हिसाब से परम क्या है? (P23-0135)

बस आप पहले आत्मज्ञान तक तो पहुंचो। राग, द्वेष, मोह, आसक्ति, इच्छा, अपेक्षा, मेरा और कर्ता के भाव से अपने आप को छुड़ाओ तो पहले — तब कुछ समझ में आएगा ना, जब अपने आप को निकालोगे।

प्रश्न: गुरु जी, दुनिया में इतने गुरु हैं। आपने उनका सहयोग करने की क्यों नहीं सोची, और अपना अलग मार्ग, अपनी अलग कुटिया क्यों खोली? (P23-0136)

इसलिए कि हम भी बहुत गए, ठीक है, तो हमें कोई मार्ग मिल नहीं रहा था, कोई मार्ग समझ नहीं आ रहा था। तो मैंने एक प्रत्यक्ष मार्ग की खोज की। और प्रत्यक्ष मार्ग को फैलाने के लिए तो अपना खुद का कुटिया बनाना ही पड़ेगा, क्योंकि आप किसी और जगह से तो फैला नहीं सकते। तो फैलाने के लिए तो आपको खोलना ही पड़ेगा।

प्रश्न: गुरु जी, उम्मीद से कैसे मुक्त हुआ जाए? आत्मज्ञान भी तो एक उम्मीद है।

(P23-0137)

उम्मीद का मतलब — बाहर के किसी के द्वारा उम्मीद। आत्मज्ञान तो स्वयं की स्थिति है। उम्मीद कहां है? सारी उम्मीदों से जब आप मुक्त होंगे, तो आपको आत्मज्ञान होगा। तो यह उम्मीद नहीं है।

प्रश्न: गुरु जी, जब माता-पिता के भीतर संतान के लिए प्रेम न होकर केवल धन का लालच और क्रोध रह जाए, तो अपनी मानसिक शांति के लिए उनसे दूरी बनाना सही है या गलत? (P23-0138)

दूरियां बना लो। दूरियां बना ही लो। और देखो, अगर उन्हें जरूरत हो, वे बोलें, तो जरूरत पर उनके काम भी आ जाओ। दूरियां तो बना ही लेनी चाहिए।

प्रश्न: गुरु जी, वह परम सहजता, आराम, सुगमता और विश्राम कहां निहित है?

(P23-0139)

अपने आप में। जब आप अपने आप में स्थिर हो, तो परम आनंद, आराम — विपरीत परिस्थितियों में भी अनुकूल परिस्थितियां — अपने आप में। मैंने तो बता दिया। बस अपने आप को समझो, अपना आत्मिक कल्याण करो। आप देखो कि मेरा आत्मिक कल्याण कैसे होगा।

प्रश्न: गुरुदेव, कृपा करके मुझ निकृष्ट जीव पर दया कीजिए, दर्शन दीजिए।

(P23-0140)

निकृष्ट तो आपका कर्म है ना, निकृष्ट आप थोड़ी ना हो। निकृष्ट आपका कर्म है, तो आप वो कर्म छोड़ दीजिए। बात खत्म — आप जैसे थे वैसे हो जाओगे। मुक्ति के लिए काम करो, मुक्त हो जाओगे। यही तो मैं कहना चाहता हूं। निकृष्ट आपका कर्म है, आपकी आत्मा नहीं। आपकी आत्मा को आप कर्म सुधार कर मुक्त करवा सकते हो।

प्रश्न: गुरु जी, कोई दुखी हमें पुकारे और जब हम उसकी मदद करें तो खुद तकलीफ में आ जाते हैं। आगे से दूसरों की मदद कैसे करें, ताकि उनकी तकलीफ भी मिटा सकूं और खुद भी तकलीफ में न फंसूं? (P23-0141)

तो अपनी सामर्थ्य के अनुसार आप मदद करिए, तो आप कभी तकलीफ में नहीं आएंगे। जब सामर्थ्य से ज्यादा आप किसी की सहायता करते हो, तो आप तकलीफ में आ जाते हो। जब आप किसी की सहायता करो, तो आप देख लो कि मेरी सामर्थ्य क्या है, सामने वाले की जरूरत क्या है। कभी-कभी हम उसकी जरूरत से ज्यादा उसकी सहायता कर देते हैं, तो वह पगला जाता है। जैसे कोई व्यक्ति रास्ता पूछता है, और कोई व्यक्ति बहुत ज्यादा सज्जन होता है, तो वह शुरू से सोचता है कितना अच्छा रास्ता बता दूं, पानी वगैरह भी पिला दूं — लेकिन वो हां-हां करते-करते निकल जाता है। तो किसी को उतना दो जितना वो पचा सके, नहीं तो वह क्या करेगा — आपको बेइज्जत करेगा। यह मेरा व्यक्तिगत अनुभव है। ठीक है? तो मैं आपसे एक ही बात कहूंगा कि आप उतना ही दीजिए जितना सामने वाला पचा सके।

प्रश्न: गुरु जी, मैं अध्यात्म में 10 साल बहुत चला और बहुत संघर्ष, उतार-चढ़ाव देखा। इसलिए अब आगे आध्यात्मिक यात्रा चलने की न हिम्मत है, न साहस है, न सामर्थ्य। क्या करें? (P23-0142)

तो मत चलो, जाने दो। थक गए हो तो आराम कर लो। कौन इसमें जबरदस्ती कर रहा है कि नहीं, आप चलो? ये तो आपके ऊपर है। निकलना है तो चलो, नहीं तो आराम से बैठो। जब लगे कि नहीं, मेरा विश्राम हो गया, तो आगे बढ़ना। कहां कोई जबरदस्ती कर रहा है, कोई घसीट रहा है?

प्रश्न: गुरु जी, साधक क्यों बार-बार फिसलकर माया-नरक में गिर जाता है?

(P23-0143)

इसलिए कि जब इस मार्ग में चलते हो, तो जब तक उपलब्धि नहीं होगी तब तक आपको कुछ नहीं आएगा — ना मान मिलेगा, ना सम्मान मिलेगा। तो आपको लगता है मैं तो कुछ कर ही नहीं रहा हूं। ना आपको वाहवाही मिलेगी, ना शाबाशी मिलेगी। ठीक है? तो लगता है कि यार, इतना करने के बाद भी कोई कुछ नहीं कह रहा है, बोल रहा है, तो ऐसा लगता है कि मेरे द्वारा कुछ हो रहा है कि नहीं हो रहा है — भ्रमित हो जाता है। और भौतिक जगत में जैसे ही करते हो, उसका परिणाम आता है; यहां तो परिणाम एक ही बार आएगा। ठीक है? तो इसलिए ज्यादातर लोग भाग जाते हैं, क्योंकि वहां इंद्रियों द्वारा सुख मिलने लगता है। यहां ऐसा कुछ नहीं है। इसलिए ज्यादातर लोग भाग जाते हैं।

प्रश्न: गुरु जी, आपका सत्संग सुनने के बाद जब मैं आंख बंद करती हूं तो आपकी ही तस्वीर आंखों में आती है। इसका क्या कारण है? (P23-0144)

कारण छोड़ो, अपना आत्मिक कल्याण करो। तस्वीर — जिसकी तस्वीर है, क्या उसका चरित्र है जीवन में? तब तस्वीर का मतलब है।

प्रश्न: गुरु जी, हमेशा आनंद में कैसे रहें? जैसे-जैसे निर्विकार हो रहा हूं, बोरिंग लगने लगा है। प्रसन्नता कैसे बनी रहे? (P23-0145)

बस निर्विकार धीरे-धीरे हो, प्रसन्नता बनी रहेगी। ऐसा नहीं है कि नहीं रहेगी — एक समय ऐसा आएगा, बनी रहेगी।

प्रश्न: गुरु जी, मैं अध्यात्म में लगा हूं और मेरी पत्नी सोशल मीडिया में लगी रहती है, और वो हमसे नाराज रहती है क्योंकि हम गुरु-ज्ञान में लगे हैं। ऐसा क्यों होता है?

(P23-0146)

तो वो भी सोशल मीडिया में है, तो आप तो नाराज नहीं हो ना? बोलो — हम जब नाराज नहीं, तो तुम क्यों नाराज हो? तुम कहीं लगी हो, तो हम कहीं लगे हैं। परिणाम तुम्हें भी मिलेगा, परिणाम मुझे भी मिलेगा। कोई नाराज हो, चाहे खुश रहे, चाहे अच्छा कहे — आप क्या कर रहे हो? क्योंकि आपके कर्मों का परिणाम, आपका हिसाब-किताब आपको देना पड़ेगा। तो आपको यह पता होना चाहिए कि आप क्या कर रहे हो। बात खत्म।

प्रश्न: गुरु जी, क्या मुझे आपके सिस्टम ने बाहर कर दिया? (P23-0147)

सिस्टम बाहर क्यों करेगा? आपका कर्म बाहर करेगा। सिस्टम में हो तो आप हो; अगर सिस्टम को तोड़ा, तो सिस्टम बाहर फेंक देगा। तो सिस्टम बाहर थोड़ी फेंका, आपका कर्म बाहर फेंका।

प्रश्न: गुरु जी, आत्मिक कल्याण के लिए घर के लोग ही सहयोग न करें, घर छोड़ने न दें, तो क्या करें? आप कहते हैं कि यहां आने के बाद घर पर फोन करना पड़ेगा।

(P23-0148)

हां, कराना तो पड़ेगा ना। अब भाग के नहीं आना है, समझ कर आना है।

प्रश्न: गुरु जी, सारा दिन काम करके रात में सिर्फ सोने के लिए दो-तीन पैग लगाना, जिससे किसी को नुकसान नहीं, बस चुपचाप सो जाना — क्या यह भी अध्यात्म में आगे बढ़ने में बंधन है? (P23-0149)

बंधन है ना। क्योंकि आप देखो — क्या आपके शरीर को उसकी जरूरत है? क्या शरीर की मांग है? शरीर को पोषण मिलता है? शरीर को लाभ मिलता है? ये आपको देखना है।

प्रश्न: गुरु जी, किसी असमर्थ की निस्वार्थ सेवा करना और बदले में उससे कुछ न चाहकर, किसी सामर्थ्यवान से मदद की उम्मीद करना — गलत है या सही?

(P23-0150)

मुक्ति के लिए काम करो। ठीक है। सामर्थ्यवान आपकी मदद खुद कर देगा। आप पहले मुक्ति वाला काम तो करिए।

प्रश्न: गुरु जी, ईमानदारी के परे क्या है? और अगर ईमानदारी के परे मैं हूं, तो फिर क्या मैं ब्रह्म हूं? (P23-0151)

ईमानदारी के परे तुम हो, जहां ईमानदारी भी छूट जाती है। (फिर पूछने पर:) अहम का नाश करो — ब्रह्म है। तुम्हारे अलावा ब्रह्म है।

प्रश्न: गुरु जी, आपने कहा था कि उपलब्धि के पहले का जीवन देखो। लेकिन सीख तो हमें उपलब्धि के बाद ही मिलेगी ना? (P23-0152)

लेकिन सीखना तो उपलब्धि के पहले है ना। उपलब्धि के बाद तो बात ही खत्म।

प्रश्न: गुरुदेव, तीन साल से नॉनवेज छोड़ा हुआ है, लेकिन दोस्त बोलते हैं कि होटल में नॉनवेज अच्छा मिलता है, तो मन में आता है एक बार खा लूं, फिर छोड़ दूं। क्या करूं, मार्गदर्शन करें। (P23-0153)

कभी मत छूना। खाने की तो दूर, छूना भी मत।

प्रश्न: गुरु जी, क्या संसार और अध्यात्म अलग हैं? (P23-0154)

नहीं, ऐसा नहीं है। संसार तो संसार है। अध्यात्म का मतलब — मैं बेईमानी छोड़ रहा हूं, और मैं अपने जीवन को, अपनी ऊर्जा को, अपनी जरूरत में खर्च करने के साथ, अपने जितने मेरे परिवार के लोग हैं, जितना मेरा दायित्व है, कर्तव्य है, उनको निभाते हुए, मैं समाज के लिए कुछ करूंगा। यह अध्यात्म है।

प्रश्न: गुरु जी, क्या आप अपनी पारिवारिक-सामाजिक पहचानों और बंधनों से मुक्त हो? (P23-0155)

इसमें कुछ बोलने की जरूरत ही नहीं है। क्योंकि अगर मैं कहूं मुक्त हूं, तो कैसे सिद्ध होगा? मैं कहूं नहीं हूं, तो कैसे सिद्ध होगा? क्योंकि मुक्ति और बंधन तो मानसिक है ना। सिद्ध कैसे किया जाएगा? उसके कर्मों से होता है। तो अगर मेरे कर्म देख के आपको लगता है कि मैं मुक्त हूं, तो मैं मुक्त हूं; और लगता है मैं बंधन में हूं, तो फिर मैं आपके लिए बंधन में हूं। लेकिन मैं अपने लिए क्या हूं, वो मायने रखता है। क्योंकि आपके लिए चाहे मैं मुक्त हूं, चाहे बंधन में — इसका कोई मतलब नहीं।

प्रश्न: गुरु जी, क्या यह सच है कि परमात्मा कुछ आत्माओं को चुनते हैं? और ऐसी चुनी हुई आत्माओं का जीवन बहुत कठिन होता है, उन्हें घर वाले भी पसंद नहीं करते। (P23-0156)

ऐसा कुछ नहीं। आपका चुनाव है। आपको चुनना है, ऐसा कुछ नहीं है। आपने चुनाव किया है कि मुझे निकलना है।

प्रश्न: गुरु जी, आपका आशीर्वाद कैसे प्राप्त हो? (P23-0157)

ईमानदारी, सत्कर्म करो, सत्संग सुनो, अपना कल्याण करो।

प्रश्न: गुरु जी, अगर बेईमान आदमी के पास शक्ति और ताकत है, तो ईमानदार और सत्य क्या करेगा? क्या यह आपके जीवन में आजमाई हुई बात है? (P23-0158)

उसकी ताकत ही काम नहीं करेगी ना। मैं यही कहना चाहता हूँ कि उसकी ताकत ही काम नहीं करेगी, उसकी ताकत का पतन हो जाएगा। ईमानदार ही जरूरी है। अगर आप ईमानदार हैं, तो बेईमान व्यक्ति की शक्ति काम ही नहीं करती। ये मेरा व्यक्तिगत अनुभव है — मैं उस पर जिया हूँ, तभी तो बोल रहा हूँ। मैं उतना ही बोलता हूँ जितना मेरा व्यक्तिगत अनुभव है, और मैं उसमें जीता हूँ; और हर घटना इसलिए ज्यादातर बताता हूँ कि आप लोग कुछ सीख सकें और अपना उद्धार कर सकें।

प्रश्न: गुरु जी, आत्मचिंतन के लिए कैसे बैठना चाहिए? (P23-0159)

कैसे भी बैठ जाओ, जिस मुद्रा में भी बैठो, लेकिन आत्मचिंतन होना चाहिए — कि मैं कहां हूँ, किस स्थिति में हूँ, किस स्थिति में होना चाहता हूँ, और उस स्थिति के लिए क्या काम करना पड़ेगा।

प्रश्न: गुरु जी, क्या समाज अज्ञान का समुद्र है? (P23-0160)

नहीं। अज्ञानता तो हमने धारण किया है, समाज ने नहीं। अज्ञानता तो मैंने धारण किया है — समाज नहीं है।

प्रश्न: गुरु जी, शाश्वत शांति कहां और क्या है? (P23-0161)

राग, द्वेष, मोह, आसक्ति, इच्छा, अपेक्षा, मेरा और कर्ता के भाव से आप मुक्त हो जाते हो, तो शाश्वत शांति है।

प्रश्न: गुरु जी, इतने बंधन और अज्ञान बनाया ही क्यों गया कि पूरी दुनिया दुख पा रही है? (P23-0162)

नहीं। अस्तित्व ने सिर्फ अस्तित्व बनाया; अज्ञान को हमने धारण किया। ठीक है? यह मेरी गलती है, बेईमानी करके। अस्तित्व ने तो सिर्फ अस्तित्व बनाया — गलत मैंने बनाया, सही भी मैंने बनाया। क्योंकि जब मैंने गलत बनाया, तो सही की तरफ मुझे फिर आना पड़ेगा। तो मेन गलती हमसे हो गई कि हमने गलत बनाया।

प्रश्न: गुरु जी, ईमानदारी क्या है? बेईमानी क्या है? (P23-0163)

जब आप किसी के साथ गलत करते हो, किसी को नीचा दिखाते हो, पता नहीं है फिर भी पता बताते हो, किसी के साथ खिलवाड़ करते हो, किसी की भावनाओं को बिना मतलब ठेस पहुंचाते हो — तो बेईमानी है।

प्रश्न: गुरु जी, आपका सत्संग सुनते हैं। परिस्थिति तब विपरीत हो जाती है जब हम तो सामने वाले के साथ ईमानदारी और सत्कर्म से चलते हैं, पर सामने वाला व्यक्ति न अध्यात्म को समझता है, न हमारी ईमानदारी और सत्कर्म को। ऐसी स्थिति में क्या करें? (P23-0164)

कोई बात नहीं — आप समझो, आप निकलो, आप करो, अपना कल्याण करो। आपको अपना करना है। देखो, मैं अपना काम कर रहा हूँ; मेरे काम का कोई सदुपयोग कर रहा है, कोई मेरे काम की बुराई भी करता है, निंदा भी करता है, लेकिन क्या मतलब? मुझे पता होना चाहिए कि मैं क्या कर रहा हूँ, और क्या करने से मेरा क्या होगा। ठीक है? तो बस लगे रहो अपने कल्याण में।

प्रश्न: गुरु जी, अपनों की कुटिया से जाने के बाद साधक की घर में दिनचर्या कैसी होनी चाहिए, और लोगों से व्यवहार कैसा हो? (P23-0165)

जीवन में कहीं भी रहें, इतना ध्यान रखना है — सर्वप्रथम ईमानदारी और सत्कर्म, चाहे जहां भी रहें; यह तो कर्म में हो गया। अब अपनी जरूरत में जाएं। भोजन में विशेष ध्यान रखें: एक बार लेना है — न तो छोड़ना है, न तो मांगना है, यह पक्का कर लें। धीरे-धीरे भोजन के प्रति जो आसक्ति है, ज्यादा खाने की, टूट पड़ने की, वह कम हो जाएगी। अगर कभी छोड़ना पड़ जाए, तो फिर एक दिन का उपवास रखना है। यहां मानसिक मेहनत होती है, इसलिए भोजन कम दिया जाता है; लेकिन अगर आप घर पर शारीरिक मेहनत करते हैं तो उस हिसाब से दो टाइम भोजन रखना — पर नियम पक्का रखना कि एक बार लेना है, न छोड़ना है, न मांगना है। जिस तरीके से आप यहां रह रहे हो, अगर उस तरीके से जाकर जीने लगे, तो जहां भी रहोगे, आप मुक्ति से मोक्ष तक अपने आप को पहुंचा लोगे; फिर किसी की जरूरत आपको नहीं पड़ेगी। भोग और भोजन में ही तो हम लिप्त हैं। लोगों से बस जरूरत में बातचीत — काम से काम। अनावश्यक बातें मत करो; जिन बातों का कोई मतलब ही नहीं है, वह मत करो। कभी अपनी जरूरत, कभी किसी और की जरूरत — ऐसा नहीं कि अपनी जरूरत के लिए तो बात करूंगा, तुम्हारी जरूरत के लिए नहीं। सर्वप्रथम मानवता को रखना: आपको जरूरत नहीं, उसको जरूरत है और आपको पता है, तो उसे सत मार्ग बता दीजिए; नहीं पता तो सीधा बोल दो कि हमें नहीं पता। मानवता का मतलब जरूरतमंद की सेवा करना — धन से, तन से, ज्ञान से — जिस लायक आप हो, जितना आपका अधिकार है। अधिकार से ज्यादा कभी काम मत करना, नहीं तो बाद में पछताओगे; जितनी आपकी सामर्थ्य, जितनी योग्यता है, उतना। गांव में, घर में आपकी कोई बात नहीं सुनता और चौराहे पर बैठकर केंद्र की, दुनिया की बातें करते हो — अपना स्तर तो देख लो कि आप किस स्तर पर बात कर रहे हो, और क्या सच में आपकी बातों का कोई परिणाम भी आएगा? परिणाम आ रहा है तो बात करिए, नहीं तो छोड़ दीजिए। और एक बात कहूंगा — 12 महीने होते हैं; 11 महीने समाज को, परिवार को देना, लेकिन कम से कम एक महीना अपने जीवन का अपने आप को देना। एक महीना एकांतवास में गुजारो, कहीं भी — उस एक महीने में आप रहो, कोई दूसरा न रहे; मोबाइल बंद, किसी से बातचीत, लेनदेन कुछ नहीं।

प्रश्न: गुरु जी, कहा जाता है कि नाम के समान कुछ नहीं है, नाम से पाप छूट जाते हैं। तो क्या नाम जप ही मूल है? (P23-0166)

नाम आपके सहायक कब होंगे? जब ईमानदारी और सत्कर्म के बाद — तब सहायक होंगे। मैं आपको एक बता रहा हूँ: जैसे टिकट — एक टिकट ले लो तो उस लाइन में लोकल से लेकर सुपर एक्सप्रेस तक किसी भी गाड़ी में चढ़ सकते हो; लेकिन टिकट ना लो तो चलेगा क्या? नहीं। बिल्कुल इसके बिना तो कुछ नहीं है। सर्वप्रथम पहले यह है — ईमानदारी, सत्कर्म; बाद में आप कुछ भी करो, सब सहायक है। जो भी हम लेते हैं, उसका कुछ उपयोग है, ऐसे ही नहीं लेते। आप इतिहास उठा के देख लीजिए — रामकृष्ण परमहंस से ले लीजिए और इसके पीछे चले जाइए — जितने भी महापुरुष हुए, उन्होंने सत्संग किया; किसी को मंत्रों में नहीं उलझाया, विधियों में नहीं उलझाया। अर्जुन को कृष्ण ने कोई मंत्र दिया? राजा जनक को अष्टावक्र ने ज्ञान का उपदेश दिया, सत्संग दिया — मंत्र थोड़ी दिया कि एक रटो। रुकने से ही तो ज्ञान होना है; रुक कहां रहे लोग? रसपान से रुक जाएं तो ज्ञान हो जाए।

प्रश्न: गुरु जी, नाम देने वाले कहते हैं कि नाम और नामी एक हैं। इसका क्या अर्थ है? (P23-0167)

नाम और नामी एक कैसे हो सकते हैं, आप बताइए? एक तो नहीं हो सकते, दो बात तो आ ही गई। लेकिन उनके कहने का अर्थ यह है कि अगर उस नाम में अपना मन, अपने आप को डुबो दिया, तो नाम और आप एक हो जाओ — उनका भाव यह है। एक बात बताता हूँ, ध्यान से सुनना: एक सादा पेपर ले लो, और नीचे से लेकर आखिरी राष्ट्रपति तक साइन करवा लो। क्या आपको लगता है कि हर साइन का महत्व एक ही होगा? हो सकता है राष्ट्रपति पढ़ा न हो, अंगूठा ही मार दिया हो — उसकी साइन का प्रभाव कुछ अलग ही रहेगा। तो कहने का मतलब यह है कि जो व्यक्ति आपको नाम दे रहा है, क्या वह उस पद पर, उस स्थिति में है भी? और आप देख लो, जितने लोगों का नाम जप से कल्याण हुआ, उन्हें कुछ नहीं चाहिए था, और देने वाला उस परम स्थिति पर था — दोनों देखो। आज रुपयों में नाम दिया जा रहा है; देने वाले की स्थिति क्या है, वह मायने रखती है। जो खुद वासना से भरा है, वह क्या मंत्र देगा?

प्रश्न: गुरु जी, शारीरिक, आर्थिक और मानसिक — तीनों पीड़ा हमारे पास रहती हैं। शरीर ठीक हो तो पैसे से पीड़ित होते हैं, शरीर और पैसा दोनों सही हों तो भी मानसिक पीड़ा तो रहती है। इन तीनों के बारे में बताइए। (P23-0168)

बस पीड़ा वहीं है जहां से आप रसपान कर रहे हो — और कुछ नहीं। मानसिक पीड़ा क्यों? कहीं से रसपान कर रहे थे, उसमें कुछ हो गया — या तो जिसके द्वारा रसपान कर रहे थे, उन इंद्रियों को कुछ हो गया, या जिसका रसपान कर रहे थे, उसको कुछ हो गया — तो मानसिक पीड़ा हो जाएगी। पीड़ा है नहीं; पीड़ा आपने अपने तरीके से चाहिए मैं पैदा किया है। न सुख है, न दुख है, न पीड़ा है। देखिए, कोई व्यक्ति शादी करता है, एक-दूसरे को कुछ हो जाए तो पीड़ा होती है; लेकिन खटपट हुई, तलाक हुआ, फिर एक-दूसरे को कुछ हो जाए तो पीड़ा नहीं, खुशी होगी। आपके घर में कोई पशु है, दूध दे रही है, उसे कुछ हो जाए तो पीड़ा होगी; लेकिन आपने बेच दिया और एक घंटे बाद वह खत्म हो गई, तो आप बड़े खुश होंगे कि मैं बच गया। बात बस मेरा के भाव की है — जहां मेरा का भाव है। पशु पहले मेरा था, पैसा मिल गया तो तेरा हो गया। मेरा में दुख है, तेरा में नहीं। घर करोड़ों में बेचा और दूसरे दिन भूकंप में बैठ गया — कहोगे अच्छा हुआ, मैं बच गया। यह मैं कौन है जो बच गया? बस यही अहम है; अहम मेरा के द्वारा खड़ा हुआ है, और इसका मूल शरीर ही है। शुरुआत जरूरत से होती है — देखो बच्चे, एक बिस्किट मिल जाता है तो खुश हो जाते हैं; और यही बच्चे कुछ समय बाद बिस्किट लेने नहीं आएंगे, लालच में चले जाएंगे, अहम भाव — सब आ जाता है। यह कब आता है? जब आपको योग्यता से ज्यादा चाहिए, तभी आएगा।

प्रश्न: गुरु जी, जब हम अपने आप में होने के लिए बैठते हैं तो बहुत चिंता आती है, थोड़ी देर बाद बोर हो जाते हैं, कभी-कभी डर भी लगता है। क्या करें? (P23-0169)

बस उसे देखिए। आप किसी में लिप्त मत होइए — लिप्त हुए तो गए। हमें लिप्त नहीं होना है; भय को भी देखना है, सब देखते रहना है, सबको सिर्फ देखना है। मुझे इतना पता है कि यह परिवर्तनशील संसार है, बस देखते-देखते बदल जाएगा। देखते रहिए, देखते रहिए, बस देखते रहिए।

प्रश्न: गुरु जी, साधक का आत्मबल न टूटे, इसके लिए कोई दृढ़ संकल्प बताइए।

(P23-0170)

सामर्थ्यवान रहेंगे तो आत्मबल नहीं टूटेगा — सीधी सी बात है। आपके पास पैसे हैं तो होटल में जाओगे, कहोगे स्पेशल थाली लेके आओ, या मेनू कार्ड में सबसे अच्छी क्वालिटी देखोगे; और कम पैसे हैं तो सबसे सस्ती देखोगे। बस यही बात है। ट्रेन में चढ़ गए, टिकट है तो विश्वास रहेगा — टीटी आएगा, टिकट? हां, रुकिए, दे रहा हूं; और टिकट नहीं है तो आत्मविश्वास नहीं रहेगा। जिस भीड़ में हो, आपके पास ताकत है या नहीं, तब आत्मविश्वास काम करता है। हर जगह — चाहे भौतिक हो, चाहे अध्यात्म, चाहे विज्ञान — जीवन में आपकी योग्यता से ही आप कुछ कर सकते हो। यहां भी अपने आप में आने के लिए योग्यता चाहिए, और इसमें तो एकदम समझ चाहिए — हर वक्त, हर क्षण समझ के जीना है कि कोई क्या कह रहा है, क्यों कह रहा है, उसका क्या मतलब हो सकता है। और डरा हुआ व्यक्ति कभी अध्यात्म में आगे नहीं जा सकता, कभी नहीं।

प्रश्न: गुरु जी, मन को कैसे स्थिर किया जाता है? (P23-0171)

छोड़ दो मन को, आप स्थिर हो जाओ। देखिए, मन को लेकर कितनी भ्रांति है — मन से बहुत दुखी हैं, रोक-रोक के परेशान हैं; कभी नहीं रुकेगा, भाई। यह रुकने वाली चीज नहीं है। जब तक चाहिए है, मन थोड़ी देर एकाग्र हो सकता है, लेकिन हमेशा के लिए नहीं। आप एक बात बताइए — वह आपका सहायक है, आप उसे क्यों रोक रहे हो? वह जरूरत ही तो बता रहा है — आपकी जरूरत की वस्तुएं बता रहा है कि आपको यह जरूरत है। और यह गलती हमसे लोग करवा रहे हैं — 99 परसेंट लोगों ने यही कहा कि मन को रोको, और मन की गति सबसे तेज बता दी। ऐसा कुछ नहीं है। मन कहीं जाता-आता नहीं; जाता होता तो घर भेज के खबर मंगा लो कि घर में लाइव क्या हो रहा है। नहीं जाता, अंदर ही भटकता है — या तो इंद्रियों द्वारा बाहर, या जितना आपने जमा किया है उसमें, और वह भी जरूरत में। सीधा देखो — भटकने वाले आप ही हो, मन निमित्त है। अब ध्यान में भी यही बता रहे हैं कि विचारों को रोको। अरे भाई, विचार तो ऑप्शन हैं — आपको क्या चाहिए, वैसे देश, काल, स्थिति, परिस्थिति के अनुसार विचार आते हैं। आप उन विचारों का सदुपयोग करो ना।

प्रश्न: गुरु जी, उपार्जित ज्ञान और आत्मज्ञान में क्या अंतर है? (P23-0172)

उपार्जित ज्ञान — कमाया हुआ — एक जानकारी है। अगर आप उसमें कुछ जीते हो तो उससे कुछ लाभ होगा। लेकिन मेरे कहने का मतलब है — जीवंत गुरु चाहिए, सीधी सी बात है।

प्रश्न: गुरु जी, हमें आत्मज्ञान के जो रास्ते पता थे — ध्यान, नाम जाप और मंत्र जाप — आपने उन्हें गलत बता दिया, इससे प्रॉब्लम और बढ़ी हो गई है, कोई रास्ता नहीं बचा। क्या अब परमात्मा को खोजना छोड़ दूँ? (P23-0173)

अब ऐसा कुछ करो कि परमात्मा आपको खोज ले — सीधी सी बात है। और वह है ईमानदारी और सत्कर्म।

प्रश्न: गुरु जी, रसपान करना कैसे छूटे? (P23-0174)

जैसे कर रहे हो, अपने तरीके से कर रहे हो — वह तरीका छोड़ दो, तो धीरे-धीरे छूट जाएगा। अपने तरीके से करना चाहते हो, वह तरीका छोड़ दो; जैसा है वैसा करो, तो धीरे-धीरे समझ के छूट जाएगा।

प्रश्न: गुरु जी, कलयुग का सबसे बुरा कर्म क्या है और सबसे पुण्य कर्म क्या है?

(P23-0175)

मैं तो बस इतना समझा — कलयुग हो चाहे कोई युग हो — बिना मतलब किसी की भावनाओं को सताना पाप है; और आप किसी की भावनाओं को समझ के उसे मार्ग बता रहे हैं, सत मार्ग बता रहे हैं, तो यही पुण्य है। पाप-पुण्य जहां तक मैंने समझा, यही है, चाहे कोई भी युग हो।

प्रश्न: गुरु जी, आपने कौन-कौन सी साधना करके आत्म-अनुभूति पाई है? कृपया

बताइए। (P23-0176)

ऐसा कुछ बोल नहीं सकता। खोज एक थी, उस खोज में बहुत कुछ किया, लेकिन मेन पाया कि ईमानदारी और सत्कर्म मूल है — और यह मेरे जीवन में था। मतलब ऐसा था कि अगर मैं ट्रेन में भी आता था — जैसे मैं मुंबई से आ रहा था, एक जन मुझे मिल गए, दरवाजे के पास बैठे थे। मैंने कहा आप यहां बैठे हैं? बोले टिकट मेरी कंफर्म नहीं हुई। मैंने कहा चलिए, एक सीट खाली है, आप उस पर विश्राम कर लीजिए — उन्हें सुला दिया, और फिर हम रात भर बैठ के आए, इसलिए कि वे बुजुर्ग थे। यह 2011 की बात है। वे संकोच कर रहे थे, मैंने कहा आप बुजुर्ग हैं, हम युवा हैं, इतना तो कर ही सकते हैं। बांट के खाना, मिलजुल कर रहना — मैं दुनिया में इतना घूमा, मुझे लोग अपरिचित कभी नहीं लगते।

प्रश्न: गुरु जी, काम और राम दोनों में मन भागता है, उसका क्या करें? और राम में मन कैसे लगाएं? (P23-0177)

भागने दो। आप ईमानदारी और सत्कर्म अपना लो। आप कहीं मत लगाओ — न राम में, न काम में, कहीं मत लगाओ; ईमानदारी और सत्कर्म में अपने आप को लगा दो, सीधी सी बात।

प्रश्न: गुरु जी, अगर हर व्यक्ति न चाहने वाला हो जाए, तो क्या अर्थव्यवस्था, अस्पताल, बाजार, गाड़ियां या तरक्की रुक जाएगी? (P23-0178)

नहीं, और अच्छे से होगा। समाज बहुत अच्छे से चलेगा, स्वर्ग आ जाएगा — जरूरत में जीना शुरू हो, एकदम। अगर इस तरीके से लोग जिएं — आप यहां देखिए, कोई कमी महसूस हो रही है? है ही नहीं। एक हॉल में कितने लोग हो, और इतने और आ जाएं, तो भी एकदम बढ़िया से होगा — इसलिए कि यह प्रेम है।

प्रश्न: गुरु जी, क्या हमारा अतीत और भविष्य अभी के समय में मौजूद है, या यह सब हमारे दिमाग का बनाया हुआ एक काल्पनिक विचार है? क्या समय एक भ्रांति है या एक सीधी रेखा की प्रक्रिया? (P23-0179)

अगर भ्रांति है तो घर से निकल जाओ — घर तुम्हारा नहीं है, घर भी एक भ्रांति है। जरा निकल कर देखो, छोड़ कर देखो। मैं कह रहा हूं, भ्रांति है तो छोड़ दो सब; किसी के घर में घुस जाओ और कहो भ्रांति है, यह घर है ही नहीं — तो वह बताएगा घर है कि नहीं। कुर्सी पर बैठ जाइए और बोलिए कि तुम भी भ्रांति हो, तो वह बताएगा। यह सब बोलने की बात है; इसमें समय मत बर्बाद करिए। प्रत्यक्ष का सामना करिए और अपने आप को इस दलदल से निकालिए। सब भ्रम है, सब सपना है, जगत सपना है — यह सब रटी हुई बात है, इसका कोई सार नहीं। स्वप्न समझ में आ जाए तब ना — जाग जाओ तब ना। अगर स्वप्न है, तो फिर दुख-सुख क्यों? आग लग गई — स्वप्न है; कोई झापड़ मारा — स्वप्न है; तुम तो हो ही नहीं, तो फिर परेशानी, शिकायत क्यों? यह सब बोलने में बड़ा अच्छा लगता है कि संसार स्वप्नवत है — दो-चार दिन मत खाओ, मालूम पड़ जाएगा।

प्रश्न: गुरु जी, होली महापर्व के बारे में कुछ मार्गदर्शन कीजिए। (P23-0180)

होली में, मैं जहां तक समझा, जैसे एक-दूसरे के मुंह पर कलर लगा देते हैं और फिर कोई किसी को पहचान नहीं पाता — अपने ही परिवार से पूछता है, भैया यह कौन है? कभी-कभी ऐसा हो जाता है। वही हालत अपनी हो गई है — हमने भी इतना कलर लगा दिया है कि मैं पूछ रहा हूं, मैं कौन हूं? कलर है गंदगी का। और होली का मतलब यह भी है कि सब एक जैसे — न कोई शत्रु, न कोई मित्र। बहुत सारी बातें हैं, इतने में नहीं बोला जा सकता।

प्रश्न: गुरु जी, क्या सत्कर्म करने पर ईश्वर खुद अपनी शरण में ले लेते हैं? क्या हमें ईश्वर प्राप्ति की चिंता छोड़कर सिर्फ सत्कर्म करना चाहिए? (P23-0181)

ईमानदारी और सत्कर्म — दोनों। एक को पकड़ो, एक को छोड़ो, ऐसा नहीं; दोनों। ईमानदारी पकड़ने से आगे का बंधन नहीं बंधेगा, सत्कर्म करने से पिछले का नाश होगा — दोनों पकड़ना पड़ेगा।

प्रश्न: गुरु जी, गुरु किसे बनाएं और गुरु की पहचान कैसे हो? (P23-0182)

जो आपकी सफाई की बात करे, वह गुरु है — आपके पास जो है, उसकी सफाई की बात करे, तो आप समझ लो। गुरु हमेशा आपकी सफाई की बात करेगा। जब भी वह बात करेगा, हर वक्त, हर क्षण, जब भी उससे आपकी बात होगी, तो बस एक ही बात होगी — आप सुधर लो, आप सुधर जाओ। बस उससे यही बातचीत होगी।

प्रश्न: गुरु जी, रामचरितमानस की पंक्ति "ढोल गंवार शूद्र पशु नारी, सकल ताड़ना के अधिकारी" का अर्थ क्या है? (P23-0183)

शूद्र का मतलब वह होता है जिसके अंदर छल, कपट, चोरी, बेईमानी, चापलूसी, मक्कारी, धूर्तता, पाखंड है — वह शूद्र है। गंवार — जो सत्कर्म और दुष्कर्म समझने के बाद भी दुष्कर्म में फंसा हुआ है। ढोल — शरीर को बोला गया है; आप देखिए, ढोल के अंदर क्या है? कुछ नहीं, खाली है; इसके अंदर भी कुछ नहीं है, तुम भरा समझ रहे हो, यही तुम्हारी गलती है। पशु — ऐसे लोगों का जीवन पशु समान है। और नारी — यहां पुरुष-नारी की बात नहीं हो रही; जिसे चाहिए वह नारी है, देने वाला प्रकृति, पुरुष है। जैसे मीराबाई एक संन्यासी से मिलने गईं, उन्हें गेट पर रोक दिया गया कि मेरे गुरु स्त्रियों से नहीं मिलते; उन्होंने कहा, जाओ बोल देना कि मैं तो सोचती थी तुम्हारा गुरु गुरु है, मैं तो समझती थी बस एक ही पुरुष है — कृष्ण; यह दूसरा पुरुष कहाँ से आया? और जैसे ही शिष्यों ने यह संदेश पहुंचाया, गुरु उनके पीछे-पीछे दौड़ा। तो जिसे चाहिए, वह नारी है। अगर ये सब अवगुण आपके अंदर हैं, तो ताड़न — ताड़ना नहीं; ताड़ना का मतलब पीटना होता है, ताड़न का मतलब होता है सुधारना। अगर यह आप में है, तो आप अपने आप को सुधार लीजिए — इसका मतलब यह है। लेकिन इसको लोगों ने विवादित बना दिया।

प्रश्न: गुरु जी, मुझे सिर्फ एक बात पता करनी है — जो लोग नशा करते हैं, वे इतने दयालु क्यों होते हैं, और जो नशा नहीं करते वे कैसे नहीं होते — ऐसा क्यों?

(P23-0184)

ऐसा नहीं है। नशा करने वालों की पत्नियों से जाकर पूछो, उनके बच्चों से पूछो, उनके बाप से पूछो — तब आपको समझ में आएगा कि नशा करने वालों की हालत क्या है; राक्षस बन जाते हैं। बस बाहर मीठी-मीठी बात करते हैं — पता है क्यों? जूते खाने के डर से। जैसे ही परिवार में पहुंचते हैं, परिवार वालों का जीना मुश्किल रहता है। एक शराबी की कहानी सुना रहा हूं: वह मांस खरीद के लाया और पत्नी से कहा बना, मैं आ रहा हूं। पत्नी ने रख दिया और काम में लग गई, कुत्ते ने खा लिया। अब पत्नी को पता है कि शराब पी के आएगा और मांस न मिला तो बहुत पीटेगा; उसने एक कुत्ते के बच्चे को काटकर पका दिया। लेकिन यह बात बालक देख रहा था। जैसे ही पिता खाने गया, लड़का बोला — "कहूं तो माई मारी जाए, नाहीं तो बाप कुत्ता खाए।" मतलब अगर सच्चाई कह दे कि पिताजी, तुम कुत्ते का मांस खा रहे हो, तो मां को पीटेगा; और नहीं बताता तो पिता कुत्ता खा रहा है — असमंजस में फंस गया। पिता खाते-खाते रुक गया, पूछा तू कह क्या रहा है? बोला कहूंगा तो मारोगे। बोला नहीं मारूंगा; जब बात पक्की हो गई तब उसने बताया — और उसी दिन से उसने नशे का त्याग कर दिया। तो नशेड़ी की हालत जाइए उनकी बहन-बेटियों, मां से पूछिए — गांजे वाले, चरसी, अफीमबाज — पूरे घर को नर्क बना के रखते हैं। समाज में बड़े अच्छे से रहते हैं, जूते खाने के डर से; कोई उनसे बड़ा मिलेगा तो भैया-भैया कहेंगे, और जैसे ही कमजोर मिल गया, फिर देखो। तो नशेड़ियों की माता-बहनों से पूछिए, समझ में आ जाएगा कितने दयावान हैं।

प्रश्न: गुरु जी, आपने कहा कि ईमानदारी आगे का कर्म-बंधन नहीं बंधने देगी और सत्कर्म पिछले किए हुए कर्म को खत्म कर देगा। लेकिन कर्म अच्छा हो या बुरा, फलित होता ही है — तो क्या सत्कर्म भी फलित होगा? (P23-0185)

नहीं। सत्कर्म फल की तरह है — खा भी सकते हो, लगा भी सकते हो। उसमें बंधन नहीं होते।

प्रश्न: गुरु जी, आपने कहा कि साधना 'तेरा' में होती है, 'मेरा' में नहीं — इसका क्या मतलब है? (P23-0186)

मेरा में साधना नहीं होती; साधना तेरा में होती है। मेरा मतलब — अगर आपकी व्यवस्था में आप साधना करोगे, तो आपका अहम भाव ही है, साधना नहीं होगी; जैसा चाहोगे वैसा करोगे। तेरा का मतलब कोई व्यक्ति-विशेष के घर पर थोड़ी — नहीं, तब तो आप गलत जगह चले जाओगे, क्योंकि ईमानदारी का भोजन आपको दुनिया में गुरु के स्थान पर ही मिलेगा, और कहीं नहीं मिल सकता। तेरा मतलब कोई योग्य गुरु की शरण में रहकर, गुरु के सानिध्य में ही साधना हो सकती है; ऐसे-वैसे लोगों की शरण में तो और नाश कर देंगे। गुरु के साथ साधना करने के बाद फिर कहीं भी जा सकते हो — समझ कर जाओ, फिर उसके पास आओ, ऐसे आते-जाते रहो।

प्रश्न: गुरु जी, धर्म बड़ा या देश बड़ा? (P23-0187)

धर्म की परिभाषा तो समझो — परोपकार धर्म है। और लोगों से देश है, देश से लोग नहीं हैं, इस बात को समझिए। जब लोग ही गलत हो जाएंगे तो देश गया। तो सबसे पहले लोग, और लोग क्या कर्म कर रहे हैं — उससे देश है, उससे देश का बल है। जैसे लोग, वैसा देश। लोग मान के लिए कुछ भी बोल देते हैं कि देश पहले, बड़ा — अरे, जब लोग ही नहीं रहेंगे तो देश कहां है? लोगों को हटा दिया जाए तो देश क्या है — जमीन का टुकड़ा। देशवासियों से देश है, फिर देशवासी क्या कर रहे हैं उसका महत्व है; धार्मिक होंगे तो देश धार्मिक कहलाएगा, बड़ा होगा।

प्रश्न: गुरु जी, अहंकार को पूर्ण रूप से कैसे खत्म करें? (P23-0188)

अहंकार को खत्म करने की जरूरत नहीं है; अहम भाव को आने मत दो। बड़ा बनने की इच्छा का त्याग कर दो, बात खत्म।

प्रश्न: गुरु जी, क्या मैं ही ब्रह्म हूँ? (P23-0189)

नहीं, कुछ नहीं बोल सकते, क्योंकि वह 'क्या है' से परे है। देखिए, बोला भी गया है — शब्द, दृश्य, गंध, रस, स्पर्श से परे — तो फिर कैसे उसके बारे में वर्णन किया जाए? वह वाणी का विषय नहीं; नहीं बोला जा सकता, कोई नहीं बोल पाया आज तक। प्राप्त किया है लोगों ने, पहुंच गए वहां, बस उसकी बात बोल के नहीं हो सकती — संभव नहीं।

प्रश्न: गुरु जी, सब कुछ परमात्मा ही है, तो क्या परमात्मा निराकार ब्रह्म है?

(P23-0190)

आपको या किसी को भी मैं एक ही बात कहूंगा — पहले अपने दलदल से अपने आप को छुड़ाओ; परमात्मा की बात ना करो तो ज्यादा ठीक होगा। अशांत भरे जीवन से, परेशान भरी जिंदगी से कैसे छुटकारा पाओ और अपने आप में आओ — पहले तो यह काम करो। राग-द्वेष से मैं अपने आप को कैसे छुड़ा लूं, इस पर काम करो; परमात्मा-आत्मा की बात ना करो तो ज्यादा ठीक है — यह मेरी सलाह है, उन बातों में समय बर्बाद होगा। मुख्य प्रश्न लोग अपना पूछते नहीं; सभी लोग दुखी हैं, दुख से निवृत्ति चाहते हैं, और बात इधर-उधर करते हैं। तीन तरह के ताप हैं — दैहिक, दैविक, भौतिक — उनसे लोग त्रस्त हैं, छूटना चाह रहे हैं, पर वह पूछते नहीं। वे अपने दुष्कर्म से दुखी हैं — बेईमानी, दुष्कर्म छूट जाए; पर बातें वह पूछते हैं जिनका जीवन में कोई महत्व नहीं।

प्रश्न: गुरु जी, प्रेम और वासना में क्या भेद है? (P23-0191)

जब आप कुछ बेईमानी से करते हो, जबरदस्ती, तो वासना है। और प्रेम की तो बात ही छोड़ दीजिए — प्रेम तो 'कुछ नहीं चाहिए' में है; चाहिए है तो प्रेम नहीं है।

प्रश्न: गुरु जी, मोह-माया प्राचीन काल में क्या थी? उस समय तो कोई मोह-माया नहीं थी, तब भी लोग उसमें कैसे फंस जाते थे? (P23-0192)

अब कहां से प्राचीन काल में इनको ले जाएं? कल्पना वाली बात करेंगे तो खुश हो जाएंगे। अरे, जहां हो वहां की बात करो ना, भैया। प्राचीन काल में क्या था, क्या नहीं था — उससे अच्छा क्या होगा? जवाब चाहिए, लेकिन उस जवाब का कोई मतलब होगा? क्या हम उस प्राचीन काल में थे, हमें याद है? हमें तो बस इतना समझ में आया कि अभी कैसे आप निकल जाओ। प्राचीन काल से, या आने वाले काल से भी, हमें क्या मतलब है? अभी हमारा कैसे कल्याण हो जाए — जिस स्थिति में मैं हूं, इसमें हमारा कल्याण हो जाए, उसके लिए काम करना है। अतीत में जाकर, भविष्य में जाकर करेंगे क्या? कोई मतलब नहीं। और ऐसे प्रश्नों में लोग फंसे हुए हैं — टाइम पास।

प्रश्न: गुरु जी, शंकराचार्य जी ने कहा है कि मनुष्य शरीर, उसमें भी नर शरीर श्रेष्ठ है। इसे श्रेष्ठ क्यों कहा गया? (P23-0193)

इसलिए कि यही एक ऐसा शरीर है जो परोपकार करता है; बाकी कोई शरीर परोपकार नहीं करता, इसलिए इसे श्रेष्ठ बोला गया। यह शरीर ऐसा है कि आए हुए अतिथि को खिला के खुद भूखा सो जाता है; आए हुए अतिथि को अच्छा बिस्तर देके, बिना उसको बताए, खुद बिना बिस्तर के सो जाएगा। यही एक शरीर है जिसके द्वारा सत्कर्म किया जाता है, और यही एक शरीर है जिसके द्वारा उस परम सत्ता से अपना मिलना कराया जा सकता है। यही एक शरीर है जिसके द्वारा पैदा करके खाया जा सकता है; बाकी जितने भी अन्य शरीर हैं, भोग-भोजन ढूँढते हैं। यही एक शरीर ऐसा है जो अन्य पशु-पक्षियों को चोट लगने पर मलहम लगाता है; जिसे नहीं जानता, उसे भी उठाकर हॉस्पिटल तक लेकर जाता है। पृथ्वी पर और कोई ऐसा शरीर नहीं है, जहां तक मैंने समझा — इसलिए यह शरीर श्रेष्ठ है।

प्रश्न: गुरु जी, आपने बताया कि टेंशन वाला काम मत करो। मैं एक डॉक्टर हूं, मेरा काम ही टेंशन वाला है — तो क्या करूं? (P23-0194)

तो अपने पद का काम करो, उसमें टेंशन लेने की क्या जरूरत है? आपका जितना अधिकार है, उतना काम ईमानदारी से करो — उसमें टेंशन लेने की क्या जरूरत? क्या टेंशन लेने से पेशेंट बच जाएगा? दवा से, इलाज से बचेगा।

प्रश्न: गुरु जी, अगर सिर्फ मनुष्य शरीर से ही परोपकार होता है, तो क्या हाथी वगैरह एक-दूसरे की रक्षा करके, अपने बच्चों को संस्कार देकर, या वानर आदि शोर मचाकर हिरणों को शिकार से बचाकर परोपकार नहीं करते? क्या ममता के बिना परोपकार संभव है? (P23-0195)

नहीं, अपने बच्चों तक, अपने परिवार तक — वह परोपकार में नहीं आता। जानवर डर के मारे चिल्लाते हैं, सब भागते हैं — डर की वजह से चिल्लाते हैं, मालूम है शेर है; अपने लिए चिल्लाते हैं, परोपकार नहीं। हाथी के बच्चे को शेर मारता है तो उसे बचाने भी जाती है — यह परोपकार थोड़ी है; दूसरे का बच्चा हो तो नहीं जाएगी। कभी-कभी दूसरे के बच्चे को भी कुछ जानवर पाल लेते हैं — बच्चा मां से बिछड़ गया, मां मर गई, कुतिया ने बिल्ली के बच्चों को पाल लिया, बंदर ने कुत्ते के बच्चे को पाल लिया — वह परोपकार में नहीं होता, ममता में होता है, आसक्ति हो जाती है। परोपकार के लिए ममता की जरूरत ही नहीं है — उसी को परोपकार कहते हैं। परोपकार वहां किया जाता है जहां जरूरतमंद होते हैं।

प्रश्न: गुरु जी, कल 12 मार्च आपका जन्म दिवस है — क्या इसे 'प्रत्यक्ष ज्ञान दिवस' के रूप में मना सकते हैं? (P23-0196)

नहीं, देखिए, मैं आपको सीधा बता दूँ — ऐसा कुछ पक्का नहीं है; मैं 12 को कपड़ा बदलता हूँ, बस। और जन्म दिवस तो मैं उसी को बोलता हूँ जब उससे पूरी तरह प्रत्यक्ष मिलना हो जाए — उसी को जन्म समझ सकते हैं। एक तो मां से जन्म होता है, फिर ज्ञान का जन्म होता है; मेरा तो बस यही कहना है कि जब उससे मिलना हो जाए, बस वही दिन है।

प्रश्न: गुरु जी, ऐसा लगता है कि कुछ न कुछ करना है, जो पीछे संसार में कर लिया वह नहीं — पर यह पता नहीं लग रहा कि वास्तव में करना क्या है? (P23-0197)

पता है तभी तो खोज रहे हो; अगर पता नहीं होता तो भटकते ही नहीं, तब तो भटकाव का भी पता नहीं होता, खोज ही नहीं होती, जहां भी होते पड़े रहते। पड़े रहना अच्छा नहीं लग रहा, इसका मतलब कुछ करना है। अब यह पता आप ही को लगाना है कि मैं क्या करके वहां तक पहुंच जाऊंगा जहां कुछ न करना हो, क्योंकि आपको क्या चाहिए अगर बताओगे तभी सामने वाला आपको पता बताएगा। मान लीजिए आपको दुनिया का हर मार्ग मालूम हो और कोई आकर कहे मुझे मार्ग बताओ, तो आप पूछोगे ना भाई कहां जाना है? इतना तो उसे बताना पड़ेगा, नहीं तो आप कैसे बताओगे। तो कहां जाना है इसका पता आप ही को लगाना है, यह आप ही को पक्का करना है। यहां कुछ उद्देश्य से, कुछ लक्ष्य को लेके आए होंगे — जिस लिए आए थे वह हो रहा है या नहीं, यह आपको पता चलेगा; हो रहा है तो उस पर काम करो, और कहीं समझ में नहीं आ रहा है तो पूछो।

प्रश्न: गुरु जी, आप काम करना किसे कहते हैं? बाहरी काम तो हम करके आए हैं, अंदर का कोई काम हमें पता नहीं है। (P23-0198)

बाहरी से कोई मतलब नहीं, बाहरी तो करके आए हो। बस अपने आप को जांचो कि मैं कहां-कहां फंसा हूँ। शरीर से आप निकल आए हो, अभी मानसिक बंधन सारा है — सारा खेल मानसिक का है। एक, दो, चार, पांच, जितने भी हैं, उनसे अपने आप को निकालो। कैसे निकालोगे? जो उनसे महत्व है, जो उनसे उम्मीदें हैं, जो उनसे कामनाएं हैं, जो आपने बना के रखी हैं, वो छुड़ाओ। उन्हें नहीं छुड़वाना, आप छोड़ दो।

प्रश्न: गुरु जी, मुझे उनसे कोई उम्मीद नहीं, कोई कामना नहीं, कोई इच्छा नहीं; मुझे तो लगता है मैं अपनी स्थिति में हूँ — यह कैसे पता चले? (P23-0199)

कहीं न कहीं तो है, ऐसे आप कैसे कह सकते हो। यह फैसला मैं नहीं ले सकता, फैसला आपको लेना है — आप ही को पता करना है कि मैं अपनी स्थिति में हूँ कि नहीं। अगर कामनाएं नहीं हैं तब तो आप अपनी स्थिति में होते, फिर बात खत्म हो गई, अपने आप में रहो। फिर अगर और कोई कामना उठ रही है तो आप अपनी स्थिति में नहीं हो।

प्रश्न: गुरु जी, अब बस यही कामना बन रही है कि जो कुछ मुझे मिला है वह मैं लोगों में बांटूँ — जो इसका पता पूछेगा उसको बांटूंगा। (P23-0200)

अभी तो आप यहां लेने आए हो, तो अभी कैसे बांट सकते हो। कुछ कमी थी तभी उसे पूरा करने आए हो। जो वहां ज्ञान हुआ, जो उपलब्धि हुई, जो समझा — कि यही अंत है, इससे ऊपर कोई चीज नहीं — यह तो वहम है, और उस वहम को दूर करने के लिए आप यहां आए हो।